BIHAR YOGA

योगदृष्टि सत्संग शृंखला

# गणपति आराधना

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

# गणपति आराधना

ॐ, प्रेम, मंगलम्

# गणपति आराधना

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

*विश्व योगपीठ, गंगादर्शन, मुंगेर में 16 से 19 अगस्त 2012 तक आयोजित योग दृष्टि सत्संग शृंखला के दौरान दिये गये प्रवचन*




योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

*योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा    प्रथम प्रकाशन 2018*

**ISBN**: 978-81-938420-4-1



*प्रकाशक एवं वितरक – योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,*
*मुंगेर, बिहार, भारत*
*मुद्रक – एजीएन ऑफसेट प्रिंटर्स,*
*ग्रेटर नोएडा*

वेबसाइटः www.biharyoga.net



# सविनय समर्पण

*श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के चरणों में*
*जो हमारी आध्यात्मिक यात्रा में सदैव*
*प्रेरणा और मार्गदर्शन प्रदान करते आ रहे हैं*

# विषय सूची

# गणेश का उद्भव

*16 अगस्त 2012*

इस सत्संग शृंखला में हम लोग गणेश जी के बारे में चर्चा करने वाले हैं। गणेश जी दिखने में भले ही सुन्दर और गोल-मटोल हैं, लेकिन जीवन के साथ उनका बहुत गहरा सम्बन्ध है। हम सब जीवन के हर क्षण उनकी कृपा और अनुग्रह की कामना करते हैं। जीवन के विकास तथा उत्थान में गणेश जी का अमूल्य योगदान होता है। इन्हीं के नाम पर हमारी भारतीय परम्परा में एक विशेष शास्त्र है जिसे गाणपत्य तंत्र कहा जाता है। यह गणेश जी का तंत्र है और आने वाले दिनों में इस तंत्र के बारे में भी आप लोगों को बतलाएँगे।

सबसे पहले यह देखें कि गणेश जी किस परिवार से हैं और किसके पुत्र हैं? हम लोग तो मानते हैं कि गणेश जी भगवान शिव और माता पार्वती के पुत्र हैं, लेकिन क्या यह सच है? यह सत्य नहीं है। इनका निवास कहाँ है, इनका जन्म कहाँ होता है? जब हम अपनी भारतीय संस्कृति को देखते हैं तो पाते हैं कि शिव परिवार का इस पर बहुत बड़ा प्रभाव रहा है। चाहे वह एक आदर्श के रूप में हो, चाहे एक योगी के रूप में हो, चाहे विद्या और ज्ञान के प्रचारक और प्रसारक के रूप में हो, भगवान शिव और उनके समस्त परिवार की भारतीय संस्कृति पर अमिट छाप है। यह कैसे सम्भव हुआ?

## कैलास यात्रा

इसको जानने-समझने के लिये हमने एक यात्रा की और वह यात्रा थी कैलास की। वहीं पर बहुत सारी चीजें उद्घाटित हुईं, और इसी यात्रा के वृत्तान्त से हम अपने सत्संग का विषय आरम्भ करते हैं। जून के महीने में हम आठ लोग

मुंगेर से प्रस्थान करते हैं और दिल्ली पहुँचते हैं। दिल्ली से प्रस्थान कर हम लोग नेपाल की राजधानी काठमांडू पहुँचते हैं, और काठमांडू से फिर अपनी यात्रा प्रारम्भ कर तिब्बत की भूमि में प्रवेश करते हैं।

हमारे शास्त्रों में तिब्बत का प्राचीन नाम है त्रिविष्टप, जिसका अर्थ होता है 'तीन भुवन'। इसका यह नाम इसलिये पड़ा कि वहाँ पर तीन जातियाँ रहती थीं, किन्नर, गंधर्व और यक्ष। किन्नर, गंधर्व और यक्ष – ये तीनों मूलतः तिब्बत की ही जातियाँ हैं। यक्षों का क्षेत्र आता है बद्रीनाथ के ऊपर, जहाँ पर माना गाँव है, भारत का अंतिम गाँव। उसके बाद किन्नरों का जो क्षेत्र रहा, वह कैलास और मानसरोवर के आसपास का क्षेत्र है और गंधर्वों का जो क्षेत्र रहा, वह यक्ष और किन्नरों के मध्य में रहा।

तिब्बत में सबसे पहले एक छोटे-से शहर, न्यालम् पहुँचे। वहाँ पर सामान्य रूप से लोगों को कुछ दिन तक रखा जाता है, ताकि वे ऊँचाई से अभ्यस्त हो जायें। कैलास-मानसरोवर की यात्रा बहुत कठिन और दुर्गम मानी जाती है। उस ऊँचाई पर ऑक्सीजन बहुत कम है। समुद्र तल पर ऑक्सीजन करीब 21 प्रतिशत होती है, लेकिन तिब्बत में जैसे-जैसे हम ऊँचा जाते हैं, ऑक्सीजन कम होती जाती है। वहाँ पर मात्र चार प्रतिशत ही है।

इस न्यालम् गाँव में सामान्य रूप से लोगों को तीन दिन के लिये रखा जाता है ताकि वे लोग पहाड़ों पर कैसे चढ़ें, कैसे उतरें, श्वास कैसे लें, यह



सब सीख सकें। हम लोगों को कोई परेशानी नहीं हुई, क्योंकि हम लोग योगाभ्यास करते हैं, आसन-प्राणायाम करते हैं। इसलिये एक दिन के पश्चात् हम लोग वहाँ से निकल पड़े और मानसरोवर की ओर यात्रा आरम्भ की।

मानसरोवर पहुँचने के पूर्व एक और गाँव आता है, जिसका नाम है साँगा। इस गाँव में ब्रह्मपुत्र नदी को पार करके पहुँचते हैं। वहाँ पर ब्रह्मपुत्र नदी बहुत ही छोटी है। बाद में तो बहुत विशाल रूप धारण कर लेती है, लेकिन अपने उद्गम स्थान में यह छोटी-सी नदी है। नदी क्या, नाला ही कहें क्योंकि उसे आप ऐसे ही पैदल चलकर पार कर सकते हो। हाँ, कोई करता नहीं है, क्योंकि पानी बर्फीला है, लेकिन उसकी गहराई अधिक-से-अधिक दो फुट होगी। उस नदी को पार करने के बाद साँगा गाँव में दूसरा विश्राम किया और उसके पश्चात् तीसरे दिन फिर यात्रा शुरू हुई मानसरोवर की।

## मानसरोवर

जब हम लोग मानसरोवर पहुँचे तो वहाँ बहुत ही अद्भुत दृश्य देखने को मिला। बचपन में हमने कहानियों की किताबों में पढ़ा था कि मानसरोवर में राजहंस आते हैं। इसलिए मन में इच्छा तो थी कि शायद इस आधुनिक युग में भी वहाँ पर एकाध राजहंस दिख जाये। मानसरोवर करीब 17,000 फुट की ऊँचाई पर स्थित है। ठण्ढी बहुत है, लेकिन सरोवर अद्भुत है। उसका जल





एकदम नीले रंग का है और उसके तल में जो रेत और पत्थर हैं, उन्हें स्पष्ट देख सकते हो। इतना सुन्दर, साफ पानी है! कोई प्रदूषण नहीं है वहाँ पर। न कोई पण्डित है, न कोई मंदिर। केवल चालीस किलोमीटर के दायरे में मानसरोवर की परिक्रमा की जाती है।

जब हमलोगों ने मानसरोवर की परिक्रमा आरम्भ की, तो वहाँ पर अनेक प्रकार के जीव-जन्तु, पशु-पक्षी दिखलाई दिये। हिरणों के झुण्ड के झुण्ड दिखाई दिये। बहुत-से ऐसे जानवर थे जो भूमि के अंदर रहते हैं और केवल अपने बिल से अपना सिर निकालकर देखते रहते हैं। हमारे यहाँ का चूहा तो छोटा होता है न, वहाँ का चूहा दो फुट का होता है! बहुत-से पक्षी भी थे, और हमारे साथ जो लोग आए थे, वे अपना कैमरा निकालकर फोटो लेने लगे। बीच मानसरोवर में पक्षियों का एक झुण्ड दिखलाई दे रहा था। किसी ने ज़ूम करके फोटो लिया तो उस फोटो में देखा गया कि चारों तरफ सफेद हंस हैं और बीच में स्वर्णिम रंग के दो राजहंस हैं। चारों तरफ से श्वेत रंग के हंसों से घिरे उन राजहंसों को देखकर लगा जैसे राजा और रानी के चारों तरफ उनके दरबारी लोग बैठे हैं!

## कैलास का प्रथम दर्शन

जब मानसरोवर पहुँचे तो वहाँ से कैलास का पहला दर्शन हुआ। मानसरोवर के दूसरी तरफ एक ओर पर्वत शृंखला है, जिसे गुरु-मण्डल पर्वत कहते हैं। ऐसी मान्यता है कि जब देवी-देवता या ऋषि-मुनि भगवान शिव से प्रार्थना करने के लिये आते हैं, तो कैलास नहीं जाते, सब गुरु-मंडल पर्वत पर खड़े होकर उनका आह्वान करते हैं, और गुरु-मंडल में ही भगवान प्रकट होकर उनकी समस्याओं का निराकरण करते हैं।

कैलास ही वहाँ पर एक ऐसा पर्वत है जो चट्टान का बना हुआ है। बाकी सब पर्वत पथरीले हैं, रेत के हैं, चट्टान के नहीं। चारों तरफ रेतीले



और पथरीले मार्ग ही दिखलाई देते हैं, क्योंकि एक समय वहाँ पर समुद्र था, जिसको नील सागर कहते थे। जब भारत महाद्वीप एशिया महाद्वीप से अलग था तो दोनों के बीच में एक समुद्र था, जिसका नाम था नील सागर। जैसे-जैसे भारतीय महाद्वीप एशियाई महाद्वीप से टकराया समुद्र गायब होता गया। अपने यहाँ जो नील पुराण है, वह इसी सभ्यता की कहानी है, जो मिटी दोनों महाद्वीपों के टकराने से। दोनों भूखण्डों के टकराने के पश्चात् सागर समाप्त हुआ और इसीलिये ऊँचाई पर आपको रेत ही दिखलाई देती है, समुद्र की बालू और गोल पत्थर। गोल पत्थर का मतलब मालूम है न, जो पानी में हमेशा लुढ़कता रहता है, उसके कोने सब खत्म हो जाते हैं। इसके अलावा तिब्बत में सीपियाँ भी दिखलाई देती हैं।

तो मानसरोवर के बगल में ये दो अद्भुत दृश्य हैं। एक है कैलास का प्रथम दर्शन और दूसरा है गुरु-मंडल का, जहाँ पर देवी-देवता, ऋषि-मुनि, भक्त-साधु सब आकर भगवान से प्रार्थना करते हैं कि मुझे कष्ट से बचाओ।

## ब्रह्म-सरोवर

हमलोगों ने मानसरोवर की परिक्रमा की और उसी के बगल में अपना तम्बू गाड़ा। तम्बू गाड़ने के बाद चले गये एक ऐसे सरोवर की ओर जहाँ पर एक महान् भक्त ने अपनी साधना और तपस्या की थी। उस सरोवर का आधुनिक नाम है राक्षस ताल। लोग कहते हैं कि रावण ने वहाँ पर तपस्या की थी और इसीलिये उसका नाम पड़ा राक्षस ताल। राक्षस ताल की विशेषता यह है कि मानसरोवर से मात्र 100-150 मीटर की दूरी पर अवस्थित होने पर भी वहाँ कोई पशु-पक्षी नहीं है। कोई जीव-जन्तु वहाँ पर दिखलाई नहीं देता है।

लोग कहते हैं कि यह रावण का प्रताप था, लेकिन हम ऐसा नहीं मानते, क्योंकि उस सरोवर का अस्तित्व रावण के जाने के पहले भी था। रावण ने जाकर सरोवर नहीं बनाया, उसके जाने के पूर्व उस सरोवर का नाम था

ब्रह्मसरोवर, जिसको समाज के लोगों ने नाम दे दिया राक्षस ताल। लेकिन साधु अभी भी ब्रह्मसरोवर कहते हैं।

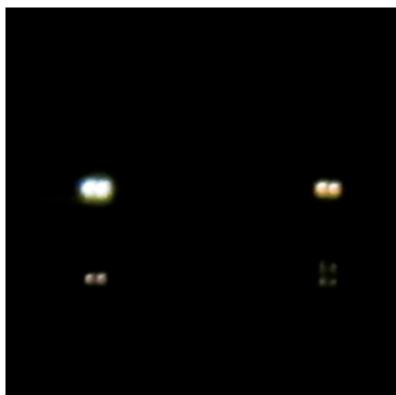
ब्रह्मसरोवर के बारे में कहा जाता है कि जब ब्रह्मा जी सृष्टि कर रहे थे तब उन्होंने सबसे पहले पंचभूतों का सृजन किया। पंचभूतों के सृजन के बाद पदार्थ का सृजन होता है – धरती, पेड़-पौधे, वनस्पति, फूल, फल पैदा होते हैं और धरती हरी बनती है। और जब जीवों की सृष्टि होने को थी, तब उसके पूर्व ब्रह्माजी ने ब्रह्मसरोवर में ही शिव जी की आराधना की, और शिव जी से आशीर्वाद लेकर उन्होंने फिर जीव-सृष्टि का कार्य आरम्भ किया। इसलिये ब्रह्मसरोवर में कोई भी जीव नहीं है। वह एक ऐसा क्षेत्र है जो सृष्टि के पूर्व की अवस्था का प्रतीक है। ब्रह्मसरोवर के क्षेत्र में आपको एक चींटी तक नहीं मिलेगी, एक पक्षी भी नहीं उड़ता है, जबकि उससे 150 मीटर दूर मानसरोवर में पशु-पक्षियों की भीड़ है। वहाँ पर हमलोगों ने रात्रि विश्राम किया।

## मानसरोवर में देवी-देवताओं के ज्योति रूप में दर्शन

हमने बचपन में पढ़ा था कि मानसरोवर में रात को देवी-देवता स्वर्ग से स्नान करने के लिये आते हैं, विशेषकर पूर्णिमा के दिन। तीर्थयात्री आसमान से ज्योति को नीचे पानी में उतरते देखते हैं, ज्योति पानी में खिलवाड़ करती है और कुछ समय बाद पुनः ऊपर की ओर प्रस्थान कर जाती है, ऐसा हमने सुना था। तो मन में इच्छा थी और इसीलिये रात को रुके भी थे वहाँ पर कि पता नहीं अगर अनुग्रह हो जाए, तो शायद किसी का दर्शन भी हो जाए। सभी ने कहा कि नहीं, आज तो कुछ नहीं होने वाला है, क्योंकि पूर्णिमा नहीं है। पूर्णिमा के एक सप्ताह बाद हम लोग वहाँ पर पहुँचे थे। कमरे में बात करते-करते हमलोगों ने सोचा, चलो कुछ दिखेगा तो नहीं, उनकी याद ही कर लेते हैं और हम सोने की तैयारी करने लगे। सोने के पूर्व करीब साढ़े नौ बजे हम बाहर निकले। सोचा कि मानसरोवर के सामने जाकर पाँच मिनट बैठेंगे।

जब बाहर निकलते हैं तो क्या दृश्य दिखलाई देता है? आठ-दस ज्योतियाँ पानी में तैर रही हैं! हमने सभी को बुलाया। सब बाहर आये, अपना-अपना कैमरा लेकर, और करीब डेढ़ घंटे तक हमलोग वहाँ पर इन ज्योतियों को पानी में खेलते देखते रहे। इसी दौरान एक ज्योति सीधे आसमान से नीचे उतरती है, थोड़ी देर पानी में खिलवाड़ करती है और उसके बाद पानी के ऊपर मंडराते हुए वह हमलोगों के नजदीक आती है और करीब 50 फुट

दूर आकर स्थिर हो जाती है। उसके बाद ऊपर की ओर आसमान में उड़ जाती है। इन ज्योतियों का भी फोटो लिया गया है।



फोटो को जब हमलोगों ने ध्यान से देखा तो वहाँ पर ज्योतियों में दो रंग दिखलाई दिये, पीला और सफेद। हमारे साथियों ने हमसे पूछा कि ज्योतियों के दो रंग क्यों दिखलाई दे रहे हैं, तो हमने अंदाज लगाया कि जो सफेद ज्योति है वह देवी है जो श्वेत वस्त्रों में आई है, और जो पीले रंग की ज्योति है, वह देवता है जो पीताम्बरी पहनकर आया है। अब पता नहीं कि यह सही है या गलत, लेकिन उस समय यही भाव था कि पीली ज्योति में देवता हैं और श्वेत में देवी। करीब डेढ़ घंटे तक इनका दर्शन किया, इनको खेलते देखा, पानी में डुबकी लगाते देखा। पानी में डुबकी लगाने पर भी ज्योति बुझती नहीं थी। आस-पास कोई नहीं था, केवल हम ही लोग थे, क्योंकि जो भी अन्य यात्री थे, सब आगे निकल गये थे। एकदम सन्नाटा था, न कोई गाड़ी थी, न आदमी।

**कैलास परिक्रमा**

अगले दिन हम लोग चल पड़े कैलास परिक्रमा के लिये। कैलास परिक्रमा करने के पूर्व एक बर्फीली नदी को पार करना पड़ता है जिसके बाद नंदी पर्वत, कैलास पर्वत और अष्टपद पर्वत का दर्शन होता है। यह कैलास का दूसरा दर्शन है जहाँ पर ये तीनों पर्वत एक साथ दिखलाई देते हैं। नंदी पर्वत एकदम काली चट्टान का बना है। वास्तव में लगता है कि वहाँ पर कोई बैल बैठा हुआ है। उसकी पीठ, पूँछ, सिर सब दिखलाई देते हैं, और यह सब एकदम प्राकृतिक है। दाहिनी तरफ नंदी है जो कैलास की ओर मुख करके बैठा है, बीच में कैलास पर्वत है और बायीं तरफ अष्टपद पर्वत। अष्टपद पर्वत जैनों के लिये एक बहुत महत्त्वपूर्ण तीर्थ स्थान है। ऐसी मान्यता है कि भगवान ऋषभदेव ने वहीं पर सिद्धि और मोक्ष प्राप्त किया था। इस पर्वत को आप देखोगे तो पिरामिड की याद आ जाएगी। लगता है मानो आठ पिरामिड को

एक-दूसरे के ऊपर रख दिया गया है। आठ अलग-अलग पर्वत दिखलायी देते हैं, अलग-अलग चरण दिखलायी देते हैं। इन पर्वतों पर चढ़ाई करना वर्जित है, क्योंकि ये सिद्ध-क्षेत्र माने गये हैं, तीर्थस्थान माने गये हैं।

यहाँ पर नंदी पर्वत, कैलास पर्वत और अष्टपद पर्वत का दूर से ही दर्शन हुआ। उसके बाद हमलोग वापस अपने निवास स्थान आ गये और वहाँ रात्रि विश्राम किया। अगले दिन जब हमलोग कैलास परिक्रमा के लिये निकले तो सब सामान पीछे छोड़ना पड़ा, क्योंकि अब चढ़ाई शुरू होने वाली थी। 17,000 फुट से अब हमलोगों को चढ़ना था 19,500 फुट की ऊँचाई तक। हवा में ऑक्सीजन बहुत कम है, इसलिये ज्यादा-से-ज्यादा अपने साथ एक टूथब्रश, टूथपेस्ट और एक तौलिया ही ले जा सकते हैं, और कुछ सामान नहीं, क्योंकि हर कदम पर एक किलो सामान भी सौ किलो जैसा बोझ प्रतीत होता है।

**यमद्वार**

जहाँ से हमलोगों को पैदल यात्रा आरम्भ करनी थी, वहाँ पर एक स्थान है जिसको कहते हैं यमद्वार – एक कमरा है दस फुट लम्बा और दस फुट चौड़ा, तिब्बती शैली में बना है, दोनों तरफ कुण्डी लगी रहती है और कमरे के भीतर कोई नहीं जाता है। जो वहाँ जाते हैं वे यमद्वार के बाहर से ही परिक्रमा करते हैं, प्रार्थना करते हैं यमराज से कि 'भगवान! मुझे सही सलामत वापस ले आना' और उसके बाद अपनी यात्रा आरंभ करते हैं।

जब हमने यमद्वार को देखा तो अचानक स्मरण आया कि यही वह स्थान है जहाँ पर नचिकेता ने यमराज की प्रतीक्षा करते तीन दिन और तीन रात बिताये थे। नचिकेता की स्मृति में हमने तीन बार वहाँ परिक्रमा की। हमने सोचा कि नचिकेता तो साक्षात् यमराज से मिला है, पता नहीं हमें यमराज दर्शन देते हैं या नहीं! तीन दिन बाहर बैठने का समय तो था नहीं हमारे पास, इसलिए सोचा कि उन्हीं के दरबार में घुसते हैं। हमने कमरे की कुण्डी खोली और अन्दर घुस गये। जब अन्दर घुसे तो एकदम अन्धेरा था, कुछ भी दिखलायी नहीं दिया। दो-चार मिनट खड़े रहे और धीरे-धीरे जब अन्धेरे में आँखें एडजस्ट हो गयीं तो चारों तरफ देखा। वहाँ एकदम रौरव नरक का दृश्य दिखलायी दिया! छत से, दीवारों से, जानवरों और आदमियों की खोपड़ियाँ टँगी हुई हैं, और एक किनारे में यमराज की भीषण, विकराल मूर्त्ति स्थापित

है। आठ-दस बकरियों के सिर वहीं लटके हुए थे, मेरे सिर के ठीक बगल में। दिखलाई तो दिया नहीं था जब घुसे थे। याक का बड़ा-सा सिर है, मरे हुए आदमियों के मुण्ड वहाँ पर पड़े हुए हैं। लगता था जिन्होंने वहाँ पर अपना प्राण छोड़ा होगा, उनके शरीर और मुण्डी को भी वहीं पर डाल दिया। बड़ा भयंकर दृश्य था। यमराज जी को भी देखा तो लगा जैसे वे भी हमारे लिए ही खड़े हैं।



हमने जल्दी से प्रणाम किया, कहा, भगवन् आपके दरबार में आ गए हैं, अब निकलेंगे तो दूसरे दरवाजे से निकलेंगे, जिधर से घुसे हैं वहाँ से नहीं। दूसरे दरवाजे के पास गए, उसको धक्का दिया, खुल गया। उस दरवाजे से बाहर निकले तो लगा कि जैसे नरक की यात्रा करके पुनः धरती पर आए हैं। दूसरे दरवाजे पर हमने संन्यास पीठ के झण्डे को लगा दिया कि यमराज का आशीर्वाद मिल गया, अब मृत्यु को जीत लिया। इस दरवाजे से घुसे, दूसरे से निकल गए। शायद नचिकेता के बाद हम ही उस कमरे से गए होंगे! उसके बाद फिर कैलास की परिक्रमा शुरू होती है।

## यमराज से सामना और शिव-कृपा से रक्षा

इस परिक्रमा के पहले एक घटना और घटी – यमराज से सामना, वास्तविक सामना, और भगवान शिव की कृपा से रक्षा। जब पिछली रात को हमलोग सो रहे थे तो तीन बार मेरी नींद खुली। भय से मेरा शरीर काँप रहा था और मन में केवल एक मंत्र चल रहा था – *यमरूपी महादेवो दक्षिणस्यां सदाऽवतु*। यही एक मंत्र बार-बार चल रहा था और शरीर भय से थरथरा रहा था, ठण्ढ में भी पसीना आ रहा था। रात के 12 बजे जब मेरी नींद खुली तो मुझे समझ में नहीं आया कि क्यों नींद खुली है और क्यों मैं भय से कंपित हो रहा हूँ। किसी प्रकार स्वयं को सांत्वना दी, सो गया। एक घंटे बाद फिर से नींद खुली, वही मंत्र दिमाग में चल रहा था – *यमरूपी महादेवो दक्षिणस्यां सदाऽवतु* और

शरीर भय से कंपित हो रहा था। समझ में नहीं आया कि क्यों यह भय हो रहा है। फिर से सांत्वना दी अपने आपको, सो गए। तीसरी बार नींद खुलती है एक घंटे बाद, उसी स्थिति में। डर के मारे शरीर काँप रहा है, मंत्र चल रहा है। समझ में नहीं आया।

खैर, 3 बज गये थे। उठे, तैयार हुए यात्रा के लिए, और इस यात्रा में पहली बार अपने सभी साथियों को बुलाया और कहा कि यात्रा करने के पूर्व हम लोगों को मृत्युंजय कवच धारण करना है, शिव रक्षा स्तोत्र का पाठ करना है। सभी पाठ करके, कवच को धारण करके फिर यात्रा आरम्भ करते हैं।

हमारे साथ एक व्यक्ति थे, नटवर रतेरिया। वे हमारे साथ ही निकले। हम यम द्वार की परिक्रमा करके, उसमें से घुस करके निकल गए और कैलास परिक्रमा के लिए आगे चल पड़े। बाकी लोग पीछे आ रहे थे, एक-एक करके। कुछ लोग जो चल नहीं पा रहे थे घोड़े पर सवारी करके आ रहे थे। कुछ लोग पोर्टर को साथ लेकर चलने लगे। पहले नम्बर में हम आगे निकल गए और करीब 6 किलोमीटर जाने के बाद जब चढ़ाई करते-करते शरीर थक गया तो हम एक पत्थर पर बैठ गए और पीछे आने वाले लोगों की प्रतीक्षा करने लगे।

पत्थर पर बैठे पाँच मिनट हुए होंगे कि एक साथी पहुँचता है और पूछता है, 'स्वामीजी आपको मालूम है पीछे क्या हुआ?' हमने कहा, 'नहीं मालूम, मैं तो पहले निकल गया था, बताओ क्या हुआ?' वह कहता है, 'नटवर अंकल जिस घोड़े पर बैठे थे, उसने उनको गिरा दिया। उनका पैर फँसा रहा और घोड़े ने उनको जमीन पर घसीटते हुए मैदान के तीन चक्कर लगाए। तब तक वहाँ के तिब्बती पोर्टर लोगों ने जाकर किसी तरह से उनको निकाला, पर घोड़ा उनको मारने के लिए तीन बार वापस आया। उसने अपने पिछले पैरों पर खड़े होकर सामने वाले पैरों से उन पर प्रहार करना चाहा, वह भी तीन बार!'



एक और बात। यात्रा पर जाने के पूर्व हमने इनकी धर्मपत्नी से कहा था कि आप रोज हमलोगों के नाम घर में एक दीपक जला देना। लेकिन उस दिन तीन बार उसने दीपक जलाया, तीन बार दीपक बुझा। चौथी बार में दीपक जला। तीन बार हमारी नींद खुली, तीन बार घोड़े ने उनको घसीटते हुए मैदान का चक्कर लगाया, तीन बार घोड़ा काल रूप में उनको मारने आया! दस मिनट बाद वे पीछे से पहुँचते हैं, उसी घोड़े पर सवार होकर!

हमने पूछा, 'नटवर जी, क्या हुआ?' वे बोले, 'स्वामीजी, कुछ नहीं।' 'कोई खरोंच, कोई चोट?' 'कुछ नहीं।' उनके शरीर में एक खरोंच तक नहीं, एक चोट तक नहीं, दर्द तक नहीं। उन्होंने कहा, 'स्वामीजी, मेरी अकाल मृत्यु थी। भविष्यवाणी की गई थी कि मैं 55 के पहले मरूँगा।' हमने कहा, 'भगवान शिव की कृपा से मृत्यु टल गई, अब 80 के बाद मरना!' जो मंत्र चल रहा था दिमाग में, *यमरूपी महादेवो दक्षिणस्यां सदाऽवतु,* वह सार्थक हुआ, क्योंकि इस मंत्र का तात्पर्य होता है कि दक्षिण दिशा में यमराज के रूप में रहने वाले भगवान शिव रक्षा करें।

## कैलास पर्वत का तीन दिशाओं से दर्शन

कैलास की परिक्रमा दक्षिण दिशा से ही प्रारम्भ होती है। इसके बाद पश्चिम की ओर जाती है, फिर उत्तर की ओर और वहाँ पर परिक्रमा समाप्त होती है। पूरब की परिक्रमा नहीं होती। दक्षिण दिशा से आप कैलास की ओर देखोगे तो लगता है कि बड़ा-सा मकान है और उसकी खिड़कियाँ, दरवाजे, सीढ़ी, सब दिखलाई देते हैं, मानो भगवान शंकर और माता पार्वती वहाँ सीढ़ियों पर चढ़कर अपने कमरे में जाते हैं।

जब हमलोग घूम करके पश्चिम दिशा की तरफ आते हैं तो वहाँ पर लगता है जैसे भगवान शिव का राज दरबार है। पत्थरों में प्राकृतिक रूप से निर्मित हाथी, घोड़े, रथ, किन्नर, साधु, देव, मुनि – ये सब आकृतियाँ दिखलाई देती हैं। और जब उत्तर की तरफ से कैलास का दर्शन करते हैं, तो लगता है जैसे इस पर्वत के ऊपर बादलों की सतह जमी हुई है। बादल-ही-बादल, पूरा पर्वत बादलों से निर्मित दिखलाई देता है। इस तरह हमलोगों ने कैलास पर्वत की तीन तरफ से परिक्रमा की।

उसके बाद आता है कैलास पर्वत के परिक्रमा पथ पर सबसे ऊँचा क्षेत्र, जिसे कहते हैं डोलमाला पास। वहाँ पर किसी भी व्यक्ति को तीस सैकेण्ड से



ज्यादा ठहरने नहीं दिया जाता है क्योंकि उस ऊँचाई पर ऑक्सीजन केवल 2 प्रतिशत है। लेकिन हम तथा हमारे साथ एक और स्वामी, वहाँ पर ठहर गए, क्योंकि कैलास से सबसे निकट का और सबसे ऊँचा स्थान वही है। सब कोई कहने लगे कि चलिए, चलिए, पर हमलोगों ने कहा कि नहीं, आप सब जाओ। फिर वहाँ पर आराम से बैठकर कैलास की मिट्टी, कंकड़, पत्थर, सब जमा किया, और वहाँ पर बिहार योग परम्परा का अंग-वस्त्र झण्डा बनाकर लगा दिया। अब जो भी वहाँ पर जाएगा, उसे हमारी छाप यमद्वार में, और सबसे ऊँचे स्थान में दिखलाई देगी! वहाँ करीब पन्द्रह मिनट व्यतीत करने के बाद हम लोग धीरे-धीरे नीचे आने लगे।

## कैलास के पूर्व तरफ शिव-परिवार का वर्णन

जब नीचे आते हैं तब मालूम पड़ता है कि शिव जी का परिवार क्या था और कैसा था। पूरब की तरफ से कैलास का दर्शन नहीं होता है, बल्कि इस तरफ गौरी कुण्ड है, चुंचुला कुण्ड है, गणेश पर्वत है, कार्तिकेय पर्वत है, मानो उनका क्षेत्र, देवी का क्षेत्र और बच्चों का क्षेत्र अलग है।

जब गौरी कुण्ड के पास हम लोग पहुँचे तो अचानक ख्याल आया कि अरे! यही तो स्थान है, जहाँ पर अपने गणेश जी का जन्म हुआ है। तो बैठ

गए वहाँ पर पाँच मिनट और कल्पना करने लगे कि माता पार्वती इस कुण्ड में स्नान करती थीं और उन्होंने अपने शरीर पर लगे उबटन के मैल से एक गण का निर्माण किया, उसमें प्राण फूँके और वह बन गया गणेश। गणेश जी का जन्म-स्थान यही गौरी कुण्ड है।

इसलिए हमने शुरू में कहा कि गणेश जी शिव जी के पुत्र नहीं हैं। वे माता पार्वती द्वारा संकल्पित पुत्र हैं, उनके मानस-पुत्र हैं। वहीं पर इनका जन्म हुआ था और इनके जो दूसरे भाई हैं, स्कन्द या कार्तिकेय, वे पार्वती-पुत्र नहीं, शिव-पुत्र हैं। दोनों का जन्म संभोग से नहीं, बल्कि संकल्प-शक्ति से हुआ है।

कार्तिकेय की कहानी भी प्राय: सबको मालूम है। शिव जी ने अपना तेज अग्नि को दिया, अग्निदेव उस तेज को संभाल नहीं सके, वह गंगा में गिर गया। गंगा में स्नान करने के लिए छ: कृत्तिकाएँ आई थीं और उन्होंने इस तेज से उत्पन्न शिशु का पालन-पोषण किया। छः माताओं के कारण कार्तिकेय के छः सिर माने जाते हैं और इसीलिए उन्हें षण्मुख भी कहते हैं। जब कृत्तिकाओं द्वारा इनका लालन-पालन हो गया तब जाकर शिव जी उनको वापस ले जाने के लिए आते हैं और तब माता पार्वती उन्हें अपने पुत्र रूप में स्वीकार करती हैं।

इस तरह गणेश और कार्तिकेय एक प्रकार से शिव जी और पार्वती जी के मानस-पुत्र हैं। उनके संकल्प से इनका जन्म हुआ है। अगर संकल्प से जन्म होता है तो निश्चित रूप से संकल्प-शक्ति में जो भाव रहा, वह इनमें प्रकट होगा। जब माता पार्वती ने गणेश जी को जन्म दिया तो उनके मन में कौन-सा भाव था? यही कि मेरा पुत्र मेरी रक्षा करेगा। जब शंकर जी कार्तिकेय को देखते हैं तो उनके मन में कौन-सा भाव होता है? यही कि यह देवताओं के संतापों को हरेगा, उनका सेनापति बनकर उनकी रक्षा करेगा।

जब गणेश जी का जन्म हुआ उस समय भगवान शिव बाहर थे। उनको मालूम भी नहीं था कि पार्वती ने अपने संकल्प से एक पुत्र को जन्म दिया है। गणेश जी के जीवन में जो पहला संघर्ष हुआ, वह अपने पिता के साथ ही हुआ। जीवन की पहली लड़ाई अपने पिता के साथ हुई। उसके बाद शिव जी क्रोध में उस बालक के सिर को काट देते हैं। जब बालक का सिर कटता है, तब माता पार्वती को बहुत क्रोध आता है, और वे विकराल रूप धारण करके पूरे संसार का संहार करने को तैयार हो जाती हैं। लेकिन देवताओं की प्रार्थना से वे पसीजती हैं और भगवान शिव से कहती हैं कि आप तो संसार

के सबसे बड़े शल्य-चिकित्सक हो, सर्जन हो, मेरे बेटे को जिला दो। शिव जी भी गजब के न्यूरो-सर्जन हैं। एक प्रयोग किया था दक्ष के साथ। दक्ष का सिर धड़ से अलग हुआ तो बकरे का सिर लगा दिया, और अब उसी हुनर का उपयोग यहाँ पर गणेश जी के साथ करना पड़ा। यहाँ भी माइक्रो-सर्जरी करके हाथी के सिर को मनुष्य के धड़ में जोड़ दिया।

इस प्रकार जब गणेश जी हाथी के सिर को प्राप्त करते हैं, तब उनको वरदान दिया जाता है कि किसी भी आराधना में पहली आराधना आपकी होगी। सभी गणों के आप अध्यक्ष हो, नियंता हो। आप सभी प्रकार के विघ्नों को दूर करोगे, विघ्नहर्त्ता होगे। भगवान गणेश को अपने माता-पिता और अन्य देवी-देवताओं से जितने भी आशीर्वाद मिलते हैं, ये सब ऐसे-ऐसे आशीर्वाद हैं जो जीवन में हमेशा मंगल ही लाते हैं।

कार्तिकेय को ऐसा कोई आशीर्वाद नहीं मिला था। उनको केवल *विजयी भव* का आशीर्वाद मिला था। तुम्हारा जन्म एक विशेष प्रयोजन से हुआ है, तुम देवताओं के सेनापति बनो, तारकासुर का वध करो, वही तुम्हारे जन्म का प्रयोजन है। मतलब कार्तिकेय का एक-लक्ष्य कार्यक्रम था, तारकासुर का वध। उसके बाद फिर उनका तो नामों-निशान नहीं, वे नाराज होकर चले गये दक्षिण भारत।

उनकी नाराजगी के पीछे भी एक कहानी है, उनकी शादी की, जिसमें गणेश जी ने बाजी मार ली। अपने माता-पिता और गणेश जी से नाराज होकर कार्तिकेय चले जाते हैं दक्षिण भारत। कहते हैं कि आप लोग उत्तर में हो, मैं जाता हूँ दक्षिण, एकदम विपरीत दिशा। दक्षिण में जाकर वे क्रौंच पर्वत पर साधुओं के साथ अपना समय व्यतीत करने लगे और इस तरह वे तो साधु हो गये।

## भारत में शिव परिवार का साम्राज्य

इधर शिव जी ने भी सोचा, 'यह तो अच्छा नहीं कि हम तीन कैलास में रहें और हमारा एक पुत्र चले जाए दक्षिण। लोग सोचेंगे कि शिव-शक्ति कैसे माता-पिता हैं जो अपने बेटे की परवाह नहीं करते।' और परेशानी यह कि बेटा वापस आना नहीं चाहता है। तब शिव जी गणेश जी को आदेश देते हैं, 'तुम संतुलन को बनाए रखने के लिये पश्चिम की तरफ चले जाओ। पश्चिम में तुम्हारा राज्य हो जायेगा। कार्तिकेय ने तो अपने राज्य की स्थापना कर



ली दक्षिण में। तुम चले जाओ पश्चिम में, पार्वती चली जाएँगी पूरब में और हम रहेंगे उत्तर में।'

इसलिए आप देखोगे कि दक्षिण में कार्तिकेय की आराधना प्रमुख है, महाराष्ट्र जैसे पश्चिम के प्रांतों में गणेश जी की आराधना अधिक होती है, पूरब में देवी की आराधना ज्यादा प्रचलित है और उत्तर भारत में शिव जी की आराधना ज्यादा होती है। इस प्रकार पूरे भारतवर्ष में शिव जी ने अपना साम्राज्य स्थापित कर दिया।

हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि हर युग में एक अलग आराध्य की आवश्यकता होती है। कलियुग के लिये देवता हैं चण्डी और गणपति, *कलौ चण्डीविनायकौ*। कलियुग में इन्हीं की आराधना होनी चाहिए, और यह प्रासंगिक भी है। आज के युग में हर व्यक्ति बढ़िया भोजन, बढ़िया रहन-सहन चाहता है, और गणेश जी भी यही पसंद करते हैं। वे घर में आते हैं तो अच्छा भोजन खाते हैं, खिचड़ी, दाल, चावल नहीं खाते। इसलिए घर में तो सभी कोई स्वाभाविक रूप से भगवान गणेश की आराधना करते हैं, और उनका अनुसरण भी करते हैं। साथ ही चण्डी की आराधना भी करते हैं, क्योंकि वही सबकी दुर्गति, दुर्व्यवस्था और पीड़ा को दूर करती हैं। हमारे शास्त्रों में गणेश और चण्डी की आराधना ही कलियुग के लिए उपयुक्त बताई गई है, और

इसी आधार पर गणेश आराधना का एक क्रम निश्चित किया गया है जिसको वेदों में भी स्वीकार किया गया है और तंत्र-शास्त्रों में भी। ऋग्वेद में गणेश जी का उल्लेख आता है। ऋग्वेद में गणेश उपासना का महत्त्व और विधि बताये गये हैं, वैदिक पद्धति के अनुसार। इसी प्रकार से तंत्र-शास्त्रों में भी गणेश आराधना, गणेश उपासना और गणेश प्रतीकों का वर्णन है।

आध्यात्मिक तथा यौगिक दृष्टिकोण से भी गणेश की आराधना सर्वप्रथम होती है, क्योंकि कुण्डलिनी जो मूलाधार चक्र में सोई हुई है, उस मूलाधार चक्र के देवता हैं गणेश। इसलिये अगर कुण्डलिनी को जगाना है तो पहले गणेश जी को पटाना पड़ेगा। सीधे 'जागो माँ, जागो माँ, कुल-कुण्डलिनी माँ' कहने से कुछ नहीं होगा। गणेश जी कहेंगे, वे तो सोयी हुई हैं, जगाने वाला तो मैं बैठा हूँ। इसलिये गणेश आराधना पहले करनी पड़ती है और यहीं से हमलोगों का विषय प्रारंभ होगा।



# अंत:करण के अधिष्ठाता गणेश

*17 अगस्त 2012*

कल गणेश जी के बारे में चर्चा आरम्भ की थी और इस चर्चा का विषय सिर्फ गणेश जी की कहानी नहीं, बल्कि जीवन में गणेश जी की उपयोगिता भी है, जैसा हमारे शास्त्रों और मनीषियों ने हमको समझाया है। गणेश जी की इस चर्चा के क्रम में कल हम आप लोगों को कैलास यात्रा पर ले गये थे और हमने आपको बताया था कि गणेश जी माता पार्वती के मानस-पुत्र हैं और कार्तिकेय जी भगवान शिव के।

**गणेश-जन्म का प्रयोजन**

गणेश जी के जन्म के प्रसंग को आज थोड़ी गहराई से देखते हैं। मूल कथा तो आप जानते हो कि शिव जी के सभी गण उनकी ही सेवा में हमेशा तत्पर रहते थे और माता पार्वती के पास सेविकाओं के अतिरिक्त कोई और गण नहीं था जिसे वे कुछ कार्य दे सकें। उनके मन में इच्छा होती है कि मेरा भी कोई गण होना चाहिए। इस विचार से प्रेरित होकर एक दिन जब वे स्नान करने गई थीं और शरीर में उबटन लगाई थीं तो उबटन को साफ करके उससे उन्होंने एक पुतला तैयार किया। उस पुतले के भीतर अपनी शक्ति से प्राणों का संचार किया, और जब उस पुतले में प्राणों का संचार होता है तो वह मानव रूप धारण कर लेता है। माता पार्वती उसे आदेश देती हैं कि तुम मेरे द्वार पर खड़े होकर मेरी अनुमति के बिना किसी को अन्दर नहीं आने देना।

बाल गणेश माता पार्वती के इस आदेश को मान कर अपना डंडा लेकर द्वार पर पहरा देने लगते हैं। अब देखिये, कुछ ही घंटों पहले जन्म हुआ है



और जन्म लेते ही उनको ड्यूटी दे दी गई कि तुम दरवाजे पर खड़े हो जाओ, दरवाजे का ख्याल करो। मतलब यहाँ से गणेश जी का कार्य आरम्भ होता है, दरवाजे को वे देखते रहते हैं।

कुछ समय पश्चात् भगवान शिव वहाँ आते हैं और माता पार्वती के महल में घुसने का प्रयास करते हैं। अब बाल गणेश को तो मालूम नहीं था कि यह कौन आदमी है। उन्होंने मार्ग रोक दिया और फिर स्वाभाविक रूप से भगवान आशुतोष को क्रोध आया कि यह कौन धृष्ट बालक है जो मेरा मार्ग रोक रहा है। यह एक और बिन्दु है, जिसपर मैं आपका ध्यान बाद में आकृष्ट करूँगा। गणेश जी को हम लोग विघ्ननाशक कहते हैं, लेकिन वे विघ्नदायक भी होते हैं। जो लेता है, वह देता भी है। दोनों काम एक साथ होते हैं।

यहाँ पर गणेश जी ने भगवान शिव के सामने ही अपना डंडा लगा दिया। कहा कि आप अंदर नहीं जा सकते। शिव जी ने पूछा, 'तुम जानते हो मैं कौन हूँ?' बाल गणेश ने कहा, 'नहीं जानता।' उनका शिव जी से कोई सम्बन्ध था ही नहीं। उनका सम्बन्ध तो शक्ति से था, जिनके वे मानस पुत्र थे। आगे की कहानी तो लम्बी है, लेकिन संक्षेप में गणेश का शिव जी और उनके गणों के साथ संग्राम होता है। उस संग्राम में जब शिवजी देखते हैं कि गणेश का पलड़ा भारी पड़ रहा है तो अपने त्रिशूल से उनका सिर काट देते हैं।

जब गणेश का सिर शिव जी के त्रिशूल से कट जाता है, उस समय माता पार्वती अपने कक्ष से बाहर निकलती हैं और देखती हैं उनका मानस-पुत्र जमीन पर मृत पड़ा है। क्रोधित होकर वे शक्ति रूप में अपने आप को प्रकट करती हैं और संसार को नष्ट करने के लिये तैयार हो जाती हैं। तब अन्य देवी-देवता, ऋषि-मुनि, मनुष्य आदि सभी प्राणी आते हैं और भगवती से प्रार्थना करते हैं कि आपका क्रोध शांत हो जाए। भगवती कहती हैं कि मेरा क्रोध कैसे शांत होगा जब मेरा पुत्र जमीन पर मृत पड़ा है।

तब नारायण शिव जी से कहते हैं, 'भगवन्! यह भगवती का पुत्र है। इसे जीवित कर दीजिये, नहीं तो पूरा संसार, पूरी सृष्टि ही समाप्त हो जायेगी।' शिव जी अपने गणों से कहते हैं, 'उत्तर दिशा में जाओ। वहाँ अगर तुम एक विशेष मुहूर्त्त में जन्मे किसी नवजात शिशु को देखते हो तो उसका सिर काटकर ले आओ।' गण उत्तर दिशा की ओर गये। बहुत-से नवजात शिशुओं को देखा, लेकिन कोई उस मुहूर्त्त में नहीं जन्मा था, जिसके बारे में शिव जी ने संकेत दिया था। बहुत-से गण निराश होकर लौट आये और कहा कि भगवन्, ऐसा कोई प्राणी मिला नहीं। लेकिन कुछ गण बाद में आये और उन्होंने कहा, 'भगवन्, हमने एक हाथी का बच्चा देखा है जो ठीक उसी मुहूर्त्त में जन्मा है।' शिव जी कहते हैं कि उसी का सिर काटकर ले आओ। गण जाते हैं और हाथी के बच्चे के सिर को काटकर कैलास वापिस लाते हैं, जहाँ भगवान शिव गणेश जी के शरीर पर उस सिर को लगाते हैं और उसको जीवनदान देते हैं। यह कहानी तो सभी जानते हैं, लेकिन इस कहानी का गूढ़ अर्थ क्या है?

## गणेश – शिव तथा शक्ति तत्त्व को जोड़ने वाली कड़ी

जिस गणेश आराधना और उपासना की चर्चा हम लोग इस सत्संग शृंखला में करने वाले हैं, उसकी भूमिका इसी कहानी में बनती है। शिव और शक्ति को अध्यात्म में जीवन का आधार मानते हैं। शिव है चेतन तत्त्व और शक्ति है जड़ तत्त्व, दोनों का हमारे जीवन में अस्तित्व है। पंचतत्त्वों से निर्मित यह शरीर शक्ति की देन है, लेकिन इस शरीर के भीतर जो चेतना, सजगता, बुद्धि और ज्ञान है, वह शिव का प्रसाद है।

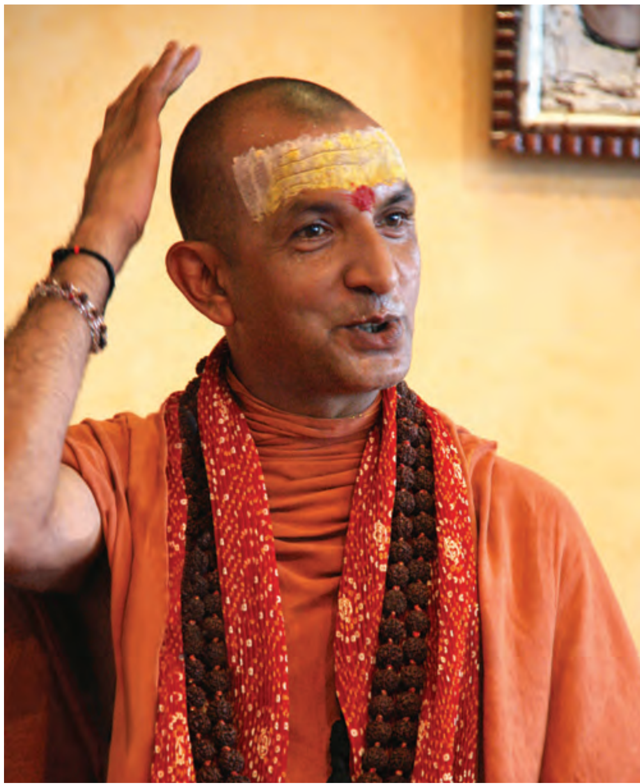
हमारे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी एक दृष्टान्त देते थे। एक अंधा आदमी और एक लंगड़ा आदमी, दोनों यहाँ पर सत्संग में भाग लेने के लिए आना

चाहते हैं, पर कैसे आयें? अंधा देख नहीं सकता है, लेकिन पैरों का उपयोग कर सकता है, चलने में सक्षम है। और जो लंगड़ा है, वह चल नहीं पाता, लेकिन सब चीजों को देख सकता है। तो जब एक लंगड़े और एक अंधे को इस सत्संग में आना है, तो कैसे आयेंगे? उत्तर सरल है। लंगड़ा अंधे के कंधों पर बैठकर, अंधे को बतलाते जायेगा कि तुम सीधे चलो, दाहिने मुड़ो, सामने सीढ़ी है, ऊपर चढ़ो। उसके निर्देशानुसार अंधा चलकर लंगड़े के साथ यहाँ पर पहुँच जायेगा।

यह दृष्टान्त शिव और शक्ति के स्वरूप को निरूपित करता है। शिव लंगड़े हैं, चलते नहीं है, लेकिन देखते सब कुछ हैं। जबकि शक्ति अंधी है, देखती नहीं है, लेकिन सब कुछ कर सकती है। तथापि सृष्टि के कार्यों को कराने के लिये उसको चेतनता की आवश्यकता है, एक ऐसे लंगड़े की जरूरत है जो चल नहीं पाता, लेकिन देख सकता है।

अब जरा देखिये। शक्ति, जो जड़ तत्त्व है, वह अपने संकल्प से एक जीवन को प्रकट करती है, एक गण को जन्म देती है और इस गण का जो स्वरूप है, वह मानवीय है। लेकिन जड़ प्रकृति से उत्पन्न प्राणी क्या चेतन होगा? नहीं, जड़ से उत्पन्न चीज जड़ ही होगी। इसलिए प्रकृति जब गणेश को जन्म देती है तो गणेश का रूप भी जड़ होता है। प्रकृति या शक्ति सृष्टि का कारण है, यह अनादि, अव्यक्त, असीम और अनन्त है। उसे व्यक्त सृष्टि से अपने सम्बन्ध को जोड़ने के लिये एक गण का निर्माण करना पड़ता है, एक माध्यम बनाना पड़ता है। जो अव्यक्त और अनन्त है, उसे व्यक्त और सीमित से जोड़ने के लिये एक कड़ी की आवश्यकता पड़ती है, और वह कड़ी बनते हैं गणेश जी।

गणेश जन्म के बाद शिव जी वहाँ पहुँचते हैं। शिव जी सामान्य देव तो हैं नहीं, सभी देवों में महादेव कहलाते हैं। क्या इस परमपिता महादेव को मालूम नहीं कि गणेश कौन है? मालूम है। वे जानते हैं कि वह शक्ति के संकल्प से उत्पन्न हुआ है। लेकिन उसमें एक कमी को देख रहे हैं। क्या कमी? गणेश में चैतन्यता है ही नहीं, जड़ता है। जड़ से उत्पन्न सृष्टि जड़ ही होती है। इसलिये गणेश में चैतन्यता को नहीं देखते, बल्कि एक सामान्य प्राणी को देख रहे हैं, जो दुःख-दर्द, सभी कुछ झेलता है। सोचते हैं कि इससे कैसे काम होगा हमारा, शल्य-क्रिया की आवश्यकता है। और उन्होंने अपनी लीला की। सिर जड़ता का प्रतीक है और इसलिए उन्होंने सिर को काट दिया। उसके



बाद जो सिर लगाया, वह किसी मानव बच्चे का नहीं था, बल्कि एक हाथी के सिर को मानव शरीर पर लगाया।

**गज-मस्तक की प्रतीकात्मकता**

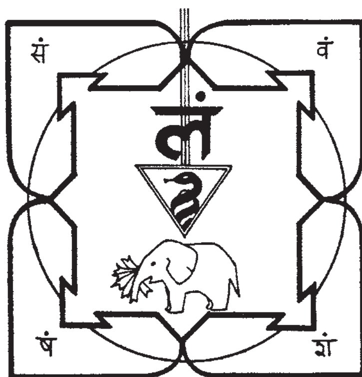
हाथी का सिर तो आप देखते हैं न, कितना बड़ा होता है। कहते हैं कि हाथी की बुद्धि बहुत तीव्र होती है, उसे सब चीजें याद रहती हैं। सभी पशुओं में हाथी ही एक ऐसा जानवर है जिसकी समृति स्थायी होती है, चिर-काल तक रहती है। वैसे स्मृति तो हर जानवर में होती है, कुत्ते में भी है, लेकिन कुत्ते की स्मृति क्षणिक होती है। एक थप्पड़ लगाओ, पहले काएँ-काएँ करेगा, लेकिन उसको फिर कुछ खिला दो, पूँछ हिलाते तुरंत वापस आ जाएगा। भूल जाएगा कि आधे मिनट पहले आपने उसको एक थप्पड़ लगाया था। लेकिन हाथी की स्मृति मनुष्य की स्मृति जैसी है। वह याद रखता है लम्बे समय तक।

एक बात और! मानव शरीर में हमलोग प्राय: एक ही ऊर्जा, एक ही प्रतिभा का उपयोग करते हैं, और वह है अपनी मानसिक ऊर्जा और मानसिक प्रतिभा। बुद्धि का उपयोग कम होता है। यह जो मानसिक प्रतिभा और ऊर्जा है, इसका उपयोग या तो चिंतन में होगा, या फिर चिंता में। इन्हीं दो क्षेत्रों में हमारी मानसिक ऊर्जा जाती है। या तो आदमी बैठकर सोचते रहेगा, योजना बनाते रहेगा, या फिर चिंता करते रहेगा, अपना सिर खुजलाते रहेगा।

लेकिन हाथी का सिर मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार, इन चारों का प्रतीक माना गया है। गणेश जी में क्षमता है कि वे इन चारों क्षमताओं को समान रूप से प्रयोग में ला सकते हैं। हम लोग नहीं ला पाते हैं। अंत:करण के ये जो चार अंग हैं – मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार, ये एक तत्त्व के अभिन्न अंग हैं, जिसको योग में हम लोग कहते हैं महत् तत्त्व। यह महत् तत्त्व भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के बीच का सेतु है।

आखिर योगी और साधु लोग क्या कहते हैं? ध्यान लगाओ, संसार के सुख-दुःख को पीछे छोड़ो और अपने आप को ईश्वर से जोड़ो। यही तो मूल बात होती है न? जब हम संसार के सुख-दुःख को पीछे छोड़ते हैं और अपने आप को ईश्वर से जोड़ते हैं तब उस समय हमें महत् अर्थात् मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार, सभी का अतिक्रमण करते हुए ऊपर उठना पड़ता है।

गणेश जी इस महत् तत्त्व के प्रतीक हैं। उनका पहला कार्य है द्वारपाल का। पहली ड्यूटी यही कि किसी को प्रवेश नहीं करने देना। अब इसे यौगिक दृष्टिकोण से समझाता हूँ। हमारे शरीर में शक्ति का स्थान कहाँ है? हमारे शरीर में जहाँ पर शक्ति अभी सोयी पड़ी है, वह क्षेत्र है मूलाधार चक्र का। मूलाधार हमारे शरीर के भीतर मेरूदण्ड के निचले हिस्से का एक चक्र है, प्राण का केन्द्र है, जहाँ पर कुण्डलिनी शक्ति सर्पिणी रूप में सुषुप्त अवस्था में पड़ी है। जैसे एक साँप शिवलिंग को लपेटे रहता है, वैसे ही शक्ति भी मूलाधार चक्र में साढ़े तीन फेरा लगाकर, कुण्डली मारे पड़ी है, सोई है। और गणेश जी को ड्यूटी दी गई है कि किसी को अंदर घुसने मत देना। इसलिए गणेश जी मूलाधार के दरवाजे पर अपना डंडा लेकर खड़े हैं।



लोग कहते हैं, कुण्डलिनी जगाओ, लेकिन हम कहते हैं कि गणेश जी को पहले पटाओ, क्योंकि जब तक वे तुमको प्रवेश नहीं देंगे, कुण्डलिनी जगने वाली नहीं है, शक्ति जागृत नहीं होगी।

इसीलिए गणेश जी को मूलाधार चक्र का देवता माना गया है। मूलाधार में पशु का जो स्वरूप है, वह हाथी का है और प्रतीकात्मक रूप से इस हाथी के चार सूँड हैं। गणेश जी को चार की संख्या बहुत प्रिय है। गणेश जी का चिह्न होता है स्वस्तिक। और स्वस्तिक क्या है? चार भुजाओं से बना प्रतीक, और जब वह घूमता है तो चक्र का रूप लेता है, जीवन-मरण का चक्र। स्वस्तिक की चार भुजाएँ जीवन के चार पुरुषार्थों – अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष के प्रतीक हैं। अगर ये अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष सही रूप से सिद्ध होते हैं तो क्या होता है? शुभ होता है, लाभ होता है। हम लोग अपने घरों में स्वस्तिक का चिह्न लगाकर बगल में शुभ-लाभ लिखते हैं न? इसका तात्पर्य यही कि जब मनुष्य द्वारा चारों पुरुषार्थ सुचारू रूप से संपन्न होते हैं तब हमेशा शुभ होता है और हमेशा लाभ होता है। जब ये पुरुषार्थ सही रूप से संपन्न नहीं होते तो झंझट, परेशानी, अशुभ और हानि ही हाथ लगती है। तो स्वस्तिक इसी सिद्धांत को दर्शाता है कि जीवन-मरण के चक्कर में चारों पुरुषार्थों को करते हुए मनुष्य शुभ और लाभ को प्राप्त करे। मूलाधार चक्र में हाथी के जो चार सूँड दिखलाये गये हैं, वे भी इन पुरुषार्थों के ही प्रतीक हैं।

अब गणेश जी खड़े हैं पार्वती जी के दरवाजे के सामने और शिव जी से कहते हैं कि तुम अंदर नहीं आ सकते हो। जब हम आपको कुछ अच्छी बात अपनाने के लिए कहते हैं तो क्या आप उसको अपनाते हो? नहीं। आपके भीतर बैठे गणेश जी रोक देते हैं हमको। 'स्वामीजी कहते तो बहुत अच्छी बात हैं, लेकिन वह हमारे लिए नहीं है।' सीधे मना कर देते हैं, अंदर मत आना। अच्छी चीजों को अंदर आने नहीं देते हैं, क्योंकि उनका रूप उस समय मनुष्य का था और मनुष्य की मूल प्रवृत्ति तामसिक ही होती है। जो तामसिक गुण से युक्त है वह सत्त्व गुण को अपने भीतर प्रवेश नहीं करने देता है।

जब शिव जी देखते हैं कि अच्छा बेटा, अभी तुम्हारा तामसिक सिर है और तुम मनमुखी हो, तब अपना त्रिशूल चला देते हैं, सिर को धड़ से अलग कर देते हैं। फिर गणेश जी का मनुष्य रूप परिवर्तित हो जाता है। अब उनका हाथी के सिर वाला रूप हो जाता है। तब जाकर वे भगवान शंकर को प्रणाम करते हैं। कहते हैं, 'हे भगवन्! आप ही मेरे पिता हैं।' जब तक मनुष्य रूप में

थे, तब तक उन्होंने शिव जी को पिता रूप में स्वीकार नहीं किया था। जब उनका हाथी का रूप हो जाता है, जब उनकी प्रतिभा केवल मानसिक नहीं होती, बल्कि मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार से पूर्ण हो जाती है, तब जाकर वे देखते हैं कि ये तो जगत्-पिता और जगत्-माता हैं, और मैं इनकी संतान हूँ। यह भाव उनके भीतर इतना प्रबल हो जाता है कि भविष्य की कोई भी परिस्थिति उनको इस भाव से, इस चिंतन से, इस विश्वास से अलग नहीं कर पाती, डगमगा नहीं सकती।

## गणेश विवाह

इसका एक सुन्दर उदाहरण है कार्तिकेय और गणेश के विवाह का प्रसंग। पर्वतराज की दो कन्यायें थी, एक का नाम था ऋद्धि और दूसरी का नाम था सिद्धि। दोनों कन्याओं के विवाह का समय आ गया था, तो पर्वतराज ने शिव जी को प्रस्ताव भेज दिया कि मेरी दो कन्याएँ हैं, और आपके दो बेटे हैं। आप भी पहाड़ों में रहते हैं, और मैं भी पर्वतराज हूँ, एक बहुत अच्छा सम्बन्ध हो सकता है। विवाह के लिए गणेश और कार्तिकेय, दोनों तैयार हो गए।

लेकिन भगवान की लीला तो चलती रहती है। शिव जी भी बहुत दूर की योजना बनाते थे। जब उन्होंने देखा कि विवाह के लिए दोनों लड़के तैयार हैं, तो उन्होंने सोचा कि कुछ ऐसा करना चाहिए जिससे मालूम पड़े कि कौन विवाह का अधिकारी है। आखिर वर को विवाह का अधिकारी भी होना चाहिए, नहीं तो लड़की का जीवन चौपट कर देता है। तो शिव जी ने कुछ ऋषियों को पटाया। कहा, 'देखो कि इन दोनों में विवाह के योग्य कौन है?' ऋषियों ने एक शर्त रखी। कहा कि दोनों कुमारों में एक प्रतिस्पर्धा होगी। जो पृथ्वी का चक्कर तीन बार लगा लेगा वही विवाह करेगा। कार्तिकेय का वाहन था मयूर, जो नभचर है, हवा में उड़ सकता है। जबकि गणेश जी का वाहन है दो फुट का चूहा, वह तो जमीन पर धीरे-धीरे ही चल पाएगा।

कार्तिकेय बहुत प्रसन्न हो गए, सोचा कि इस बार तो बाजी मैंने जीत ली। गणेश अपने चूहे पर बैठकर जब तक कैलास की सीमा से बाहर निकलेंगे, तब तक तो मैं संसार की तीन बार क्या, छः बार परिक्रमा करके वापस आ जाऊँगा। इसलिए वे तो निश्चिन्त हो गए। गणेश जी भी समझ गए कि भई, मेरे से तो यह काम होने वाला है नहीं। जब तक में बाहर निकलूँगा अपने दरवाजे से, मेरा भाई तीन चक्कर लगाकर वापस आ जाएगा।

स्कन्द के छः सिर हैं और गणेश का एक हाथी का सिर है। छः सिरों का तात्पर्य क्या होता है? गीता में उल्लेख आता है – *मनः षष्ठानीन्द्रियाणि*। कार्तिकेय के जो छ: सिर हैं, वे पाँच इन्द्रियों और एक मन के प्रतीक हैं, और वे मानव रूप में हैं। मतलब उनको क्रोध भी आता है, लोभ भी होता है, मोह भी होता है, लज्जा भी है, ईर्ष्या भी है, द्वेष भी है, घृणा भी है। जबकि गणेश जी महत् तत्त्व को समान रूप से संचालित करते हैं, संतुलित और व्यवस्थित हैं, बुद्धिमान् और ज्ञानी हैं।

अब कार्तिकेय तो अपने मयूर पर चढ़ गए और चले संसार का चक्कर लगाने। गणेश जी, जो समबुद्धि वाले थे, उन्होंने सोचा कि एक प्राणी के लिए उसके माता-पिता ही सारा संसार होते हैं। माता-पिता ही जन्म देकर एक जीव को संसार में लाते हैं, वे ही देवता हैं, वे ही प्रकृति हैं, वे ही धरती हैं, वे ही संसार हैं। तो उन्होंने एक चतुराई की। क्या? अपना पूरा झोला बाँध लिया, जैसे यात्रा में जाते हैं। उसमें अपना कौपीन, अंग-वस्त्र, टूथपेस्ट, टूथब्रश, सब रख लिया और चूहे पर भी चढ़ गए। अपने झोले के साथ चूहे पर सवारी करते हुए भगवान शिव और माता पार्वती के दरबार में आते हैं और कहते हैं कि मैं जाने के लिए तैयार हूँ, लेकिन जाने के पहले आपकी पूजा करना चाहता हूँ। दोनों बैठे हैं वहाँ पर, गणेश जी ने धूप-दीप जलाया, टीका लगाया, अगरबत्ती



से उनकी पूजा की, उनकी तीन बार परिक्रमा की, प्रणाम किया, और उसके बाद चुपचाप झोला अपने कंधे पर डाला, चूहे पर सवार हुए और शिव दरबार से बाहर निकलकर, थोड़ा इधर-उधर घूमकर अपने कमरे में आकर सो गए।

शाम का समय आया, पार्वती जी भगवान शिव से कहती हैं कि आज तो खाने का मन नहीं कर रहा, दोनों बच्चे धरती की परिक्रमा करने जो चले गए। शिव जी मुस्कुरा दिए, पूछा, 'दोनों?' पार्वती ने कहा, 'हाँ दोनों, पूरा महल सूना पड़ा है। मुझे तो गणेश की याद आ रही है। उसे तो बहुत भूख लगती है। इस यात्रा में वह क्या खाएगा? उसके झोले में तो मैंने ज्यादा कुछ नहीं देखा।'

शिव जी कहते हैं, 'अगर गणेश की इतनी याद आ रही है तो चले जाओ उसके कमरे में। वहाँ पर उसके सामान को देखोगे तो थोड़ी सान्त्वना मिलेगी, शांति मिलेगी।' तो पार्वती जाती हैं गणेश के कमरे में। दरवाजा खोलती हैं तो देखती हैं कि गणेश जी वहाँ पर खुर्राटा लेकर सो रहे हैं! उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह क्या हो गया? गणेश यहाँ पर! हम तो सोच रहे थे कि वह परिक्रमा करने के लिए गया है। उन्होंने गणेश को उठाया और उसका कान पकड़कर ले आईं शिव जी के पास कि देखिए, यह है आपका बेटा। गणेश जी का कान पकड़ना बहुत सरल है! आखिर छोटा कान तो है नहीं, कहीं पर भी पकड़ लो, खींचकर ले आओ।

शिव जी ने पूछा, 'क्यों जी, संसार की परिक्रमा करने नहीं गए?' जवाब में गणेश जी कहते हैं कि मैंने तो परिक्रमा कर ली। 'कैसे कर ली? अभी तो तुम्हारा भाई आधी दुनिया ही पार किया है और तुम कहते हो कि तुमने तीन बार परिक्रमा कर ली।' गणेश जी कहते हैं, 'हाँ भगवन्! मैंने तो धरती की तीन बार परिक्रमा कर ली है, और कल आप मेरे विवाह की तैयारी भी कर दीजिए।' माता पार्वती पूछती हैं, 'तुमने परिक्रमा कैसे कर ली? बताओ जरा!' गणेश जी कहते हैं, 'मैया, आपको मैं क्या बोलूँ? सब ग्रंथ और शास्त्र आपने ही लिखे हैं, और आप अपनी कही बात को भूल गए कि माता-पिता ही संसार और धरती के प्रतीक होते हैं।'

यह सुनकर मैया एकदम स्तब्ध रह गईं, चुप हो गईं। उन्हें समझ में नहीं आया कि इस गणेश को क्या बोलूँ! उधर शिव जी मुस्कुरा रहे थे, बोले, 'हाँ बेटा! तुमने बिल्कुल ठीक सोचा है। और कल तुम्हारी शादी हो जायेगी, दोनों कन्याओं से।' पहले शादी होने वाली थी एक के साथ, और अब यहाँ पर तय हो गया दोनों कन्याओं के साथ। अगले दिन गणेश जी ने बड़े

ठाट-बाट से ऋद्धि और सिद्धि के साथ शादी कर ली और आराम से अपना जीवन जीने लगे।

## कार्तिकेय का क्रोध

तीन दिन के बाद कार्तिकेय पहुँचते हैं कैलास। वे सोच रहे थे कि मैं पहले आ गया। वे दौड़ते हुए सीधे भगवान शिव के पास जाते हैं और कहते हैं, 'पिताजी, मैं परिक्रमा करके आ गया, अब मेरी शादी कर दीजिए।' उनके मुँह से ये शब्द निकले ही थे कि महल के बगल के दरवाजे से निकल पड़ते हैं गणेश जी और उनकी दो पत्नियाँ, ऋद्धि और सिद्धि। शिव जी को कुछ बोलने की आवश्यकता ही नहीं थी। कार्तिकेय उधर देखते हैं तो उनको लगता है बड़ा झटका। कहते हैं, 'यह कैसे सम्भव हुआ? गणेश ने मेरे को धोखा दिया है।'

अब कार्तिकेय को क्रोध आया। पाँच इन्द्रियों और एक मन के कारण। इतना क्रोध आया कि अपने माता-पिता को भी त्याग दिया उसी क्षण। कहा, 'जहाँ पर मेरे साथ धोखा हुआ है मैं वहाँ पर रहने वाला नहीं हूँ। आप दोनों रहो कैलास में, मैं जा रहा हूँ दक्षिण में।' इस तरह आवेश में आकर उन्होंने कैलास का त्याग कर दिया और दक्षिण भारत के क्रौंच पर्वत पर साधुओं की संगत में विरक्त बनकर रहने लग गए। खैर, कहानी तो लम्बी-चौड़ी है, गणपति तत्त्व को समझने के लिये जो उचित कथा है, केवल उसे समझा रहा हूँ।



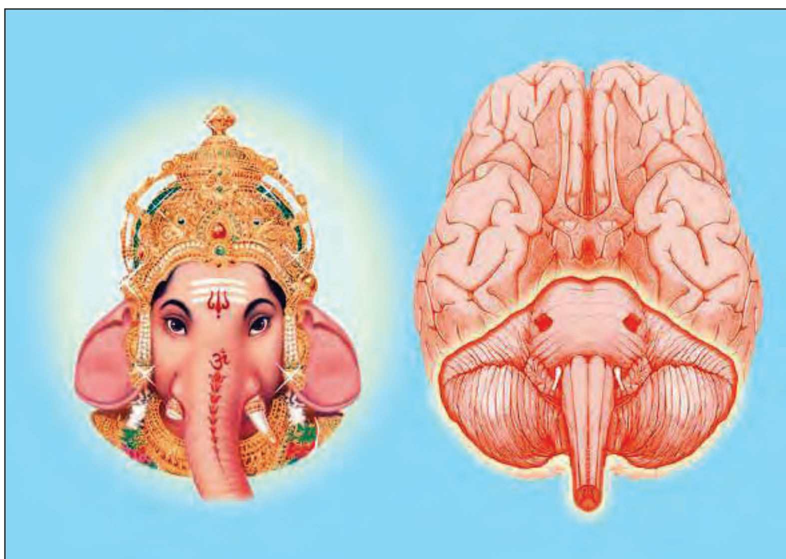
**गणेश का स्वामित्व**

इस कथा में ऋद्धि और सिद्धि का क्या तात्पर्य है? ऋद्धि का मतलब हुआ भौतिक उपलब्धि, और सिद्धि का आध्यात्मिक उपलब्धि। इस तरह गणेश जी भौतिक उपलब्धि और आध्यात्मिक उपलब्धि के पति हो गये, स्वामी हो गये।

उनके नाम को भी थोड़ी गहराई से देखते हैं। यह दो शब्दों के योग से बना है, पहला शब्द है 'गण' और दूसरा है 'ईश'। ईश का मतलब होता है स्वामी और गण का मतलब होता है समूह, प्राणियों का समूह। इस प्रकार प्राणियों के समूह के वे स्वामी हैं। प्राणियों का जो समूह है, उसमें मनुष्य भी आते हैं, देवता-दानव भी आते हैं, यक्ष-गन्धर्व वगैरह सब आते हैं। ये सभी गण हैं, समूह हैं। हमारे शास्त्रों में तो कहा गया है कि जिन चौरासी लाख योनियों से जीव गुजरता है वे सभी गण हैं। मतलब चौरासी लाख योनियों से गुजरते हुए हमलोगों पर गणेश जी का अंकुश बना रहता है। हमलोग तो हाथी पर अपना अंकुश चलाते हैं और एक हाथी गणेश जी हैं जो हमलोगों के ऊपर अपना अंकुश चलाते हैं। जो प्रत्यक्ष है और जो अप्रत्यक्ष है, जो चेतन है और जो जड़ है, जो भी समूह है, चाहे वह उच्च कोटि हो या मध्यम कोटि का या निम्न कोटि का, इन सभी के स्वामी हैं गणेश। दानव, दैत्य, राक्षस जैसे जो दुष्ट गण होते हैं उनको वे चतुराई से सँभालते हैं, और देवी-देवता जैसे जो अच्छे गण होते हैं उनको वे अपनी सरलता से सँभालते हैं।

**मस्तिष्क संरचना में गणेश**

आधुनिक सन्दर्भ में देखें तो लेबनॉन के एक वैज्ञानिक रहे हैं जिन्होंने एक अनुसन्धान किया था मस्तिष्क पर। उन्होंने मस्तिष्क के विभिन्न केन्द्रों के चित्र लिये थे और उन चित्रों में दर्शाया था कि किस प्रकार मस्तिष्क के केन्द्र विभिन्न देवी-देवताओं का रूप लेते हैं। मतलब जैसा हम शिव जी को देखते हैं वैसा ही मस्तिष्क के एक केन्द्र का स्वरूप होता है, जैसा देवी को देखते हैं वैसा ही एक रूप मस्तिष्क के भीतर होता है। इसी तरह गणेश जी मस्तिष्क के ब्रेन स्टेम के प्रतीक हैं। मस्तिष्क में जहाँ पर रीढ़ की हड्डी प्रवेश करती है वहाँ पर एक छोटा-सा भाग रहता है जिसको पुरातन मस्तिष्क या प्रिमिटिव ब्रेन कहते हैं। उसके ऊपर बौद्धिक मस्तिष्क होता है, इन्टेलेक्चुअल ब्रेन। प्रिमिटिव ब्रेन का जो सम्बन्ध है इन्टेलेक्चुअल ब्रेन के साथ, वह गणेश की




आकृति का है। ब्रेन स्टेम गणेश की सूँड है, प्रिमिटिव ब्रेन उनकी आँखें हैं, और सिर उनका है इन्टेलेक्चुअल ब्रेन, बौद्धिक मस्तिष्क। अगर कभी फोटो देखोगे ब्रेन स्टेम और प्रिमिटिव ब्रेन का, और उसके ऊपर गणेश जी की फोटो को लगा दोगे, तो आपको अन्तर दिखलायी नहीं देगा।

श्री स्वामीजी भी कहते थे कि गणेश पुरातन मस्तिष्क एवं आधुनिक बौद्धिक मस्तिष्क के प्रतिनिधि हैं और उनका कार्य हमें अपने निम्न, पुरातन स्वभाव से ऊपर उठाकर उच्च स्वभाव में स्थापित करना है। चेतना की निम्न अवस्था से ऊपर उठकर उच्च अवस्था में अपने-आपको स्थापित करना उनकी प्रेरणा और ऊर्जा से ही सम्भव हो पाता है। जब तक मनुष्य की चेतना निम्न होती है वह संघर्ष और दुःख से प्रभावित होते रहता है और अंतत: इनके कारण मारा जाता है। लेकिन जब मनुष्य की चेतना उत्तम हो जाती है तब संसार में रहकर भी उसे कोई दुःख-सुख प्रभावित नहीं करते।

एक बार हमारा एक चेला मर गया और पहुँचा यमराज के पास। यमराज उससे पूछते हैं, 'कहाँ जाओगे, स्वर्ग या नरक?' तो हमारा चेला पूछता है कि पहले बताइये स्वर्ग में कौन-कौन हैं। यमराज कहते हैं कि स्वर्ग में सब देवी-देवता हैं। चेला पूछता है, अच्छा बताइये, नरक में कौन हैं? वे कहते हैं कि नरक में स्वामी शिवानन्द हैं, स्वामी सत्यानन्द हैं, स्वामी विवेकानन्द

हैं, आइन्स्टाइन हैं, न्यूटन हैं, मतलब दुनिया के सभी योगी, सिद्धजन और वैज्ञानिक नरक में हैं!

चेले को आश्चर्य होता है कि सब सिद्धलोग नरक में, यह कैसे सम्भव हुआ? तो यमराज कहते हैं, 'बेटा, तुमको रहस्य मालूम नहीं है। जो योगी और सिद्ध होते हैं वे दूसरों के दुःखों से द्रवित होकर उनके दुःखों को दूर करना चाहते हैं। इसलिये सब सन्त-महात्मा नरक गये हैं जहाँ वे सभी दुःख-संतप्त प्राणियों को मुक्त करना चाह रहे हैं। कोई साधु स्वर्ग नहीं जाता है। वहाँ पर जब तक तुम्हारा बैंक बैलेंस है, फाइव-स्टार होटल के कमरे में रहो, लेकिन जब तुम्हारा बैलेंस खत्म हो जाता है तो गर्दन पकड़कर तुमको स्वर्ग से बाहर धकेल दिया जाता है।'

चेला कहता है, हम भी नरक में ही रहेंगे। जब वह नरक गया तो देखा कि वहाँ तो स्वर्ग से भी सुन्दर जगह बन गयी है। कहीं पर बैठकर स्वामी विवेकानन्द जी का सत्संग हो रहा है, कहीं पर स्वामी शिवानन्द जी का तो कहीं पर स्वामी सत्यानन्द जी का। कहीं पर आइन्सटाइन अपना वैज्ञानिक अनुसंधान करके नरक को और भी सुविधायुक्त बना रहे हैं। मतलब स्वर्ग से भी उत्तम हो गया था नरक क्योंकि संसार के सभी अच्छे लोग वहाँ जाकर उसके उत्थान का प्रयास कर रहे थे। यही गणेश जी का कार्य होता है। प्रिमिटिव ब्रेन से मनुष्य को ऊपर उठाते हैं और उच्च चेतना में स्थापित करते हैं।



# वैदिक गणपति आराधना

## जीवन की कमजोरियों का निराकरण

*18 अगस्त 2012*

पिछले दो दिनों से हम आपको गणेश जी के जन्म, जीवन और विवाह के बारे में बतला रहे थे। गणेश जी का जन्म और विवाह, इन दोनों का हमारे शास्त्रों में बहुत महत्त्व है। जब उनका जन्म हुआ, तब उनके चरित्र को निश्चित किया गया कि भविष्य में इनका क्या काम होगा, और जब उनका विवाह हुआ तो निश्चित किया गया कि उनसे वरदान क्या मिलेगा। विघ्नों को दूर करने की क्षमता – इससे उनका चरित्र निश्चित हुआ, और अगर व्यक्ति अपने जीवन में चारों पुरुषार्थों को करते हुए आगे बढ़ता है तो उसके जीवन में ऋद्धि और सिद्धि, शुभ और लाभ, सब प्रकार के मंगल की प्राप्ति होती है – यह उनका वरदान निश्चित हुआ।

गणेश जी की चर्चा वैदिक और तांत्रिक, दोनों वाङ्मयों में होती है। इनके अनुसार गणेश जी काल, पदार्थ और स्मृति के देवता हैं, और उनका एक प्रमुख काम है माता की रक्षा करना। बीच-बीच में और भी काम आ सकते हैं, करते भी हैं, लेकिन उनका जो प्रमुख कार्य है वह है माता की रक्षा करना। इसके लिये ही उनका जन्म हुआ था, और आज भी वे हमारे भीतर शक्ति की ही रक्षा करते हैं।

### शक्ति द्वारा सृष्टि सृजन

योग दर्शन के अनुसार सृजन क्रम में शक्ति विभिन्न रूपों को धारण करके जगत् का निर्माण करती है। आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी – ये पंच महाभूत भी शक्ति के विभिन्न रूप हैं। पृथ्वी तत्त्व का निर्माण करके, शरीर की



रचना करके शक्ति अपना काम पूरा कर देती है और विश्राम करने लगती है, शरीर में मूलाधार चक्र के भीतर। हमारे शरीर के सूक्ष्म चक्र इन्हीं पंच महाभूतों के प्रतिनिधि हैं, प्रतीक हैं।




योग मान्यता के अनुसार हमारे शरीर में आठ चक्र होते हैं। मूलाधार चक्र पृथ्वी तत्त्व का, स्वाधिष्ठान जल तत्त्व का, मणिपुर अग्नि तत्त्व का, अनाहत वायु तत्त्व का और विशुद्धि आकाश तत्त्व का प्रतीक है। ये पंच तत्त्व हो गए। उसके बाद आज्ञा चक्र गुरु तत्त्व का प्रतीक होता है। गुरु तत्त्व भौतिक तत्त्व नहीं, ईश्वरीय तत्त्व है। सहस्रार, जो सातवाँ चक्र है, वहाँ पर शिव तत्त्व है, वह भी ईश्वरीय तत्त्व है। आज्ञा तथा सहस्रार के बीच में एक छोटा-सा केन्द्र है, बिन्दु, जहाँ पर ब्राह्मण लोग चुटिया रखते हैं। हमारे योग शास्त्र के अनुसार बिन्दु चक्र इस शरीर के भीतर अमृत का स्रोत है। अमृत का निर्माण वहीं होता है। जब हम अपनी कैलास यात्रा का वर्णन कर रहे थे तो हमने आपको बतलाया था कि वहाँ एक तरफ है गुरु मण्डल पर्वत शृंखला, फिर बीच में है मानसरोवर और दूसरी तरफ है कैलास। गुरु मण्डल पर्वत गुरु चक्र का ही प्रतीक है, मानसरोवर बिन्दु चक्र है, जहाँ पर अमृत का उत्पादन होता है, और कैलास सहस्रार चक्र है।






सृष्टि के क्रम में शक्ति स्थूल और सूक्ष्म तत्त्वों का विकास करती हुई अंत में मूलाधार में जाकर विश्राम करती है, और मूलाधार के द्वारपाल हैं गणेश जी। उनको शक्ति ने पहले से ही निर्देश देकर रखा है कि मेरे कमरे में किसी को प्रवेश नहीं करने देना, चाहे वे शिव ही क्यों न हो। मतलब शिव भी मूलाधार तक नहीं आ सकते, उनका प्रवेश निषेध है मूलाधार में। गणेश जी डण्डा लेकर खड़े हैं, शिव जी को भी मारने को तैयार, जैसा कि उन्होंने पूर्व में किया भी है। जब गणेश जी मूलाधार की रखवाली में रहते हैं तो शक्ति को जागृत करने के पहले उनकी आराधना और उपासना आवश्यक हो जाती है, उनको पटाना जरूरी हो जाता है। जब वे आपके मित्र बनेंगे तभी तो दरवाजा खोलेंगे, तभी तो आपको प्रवेश देंगे, और अगर वे आपके मित्र नहीं तो प्रवेश की बात भूल जाइए, दरवाजा भी खुलने वाला नहीं है। आपकी








आध्यात्मिक जिज्ञासा मात्र जिज्ञासा ही रहेगी, वह अनुभव में परिवर्तित नहीं हो सकती, जब तक गणेश की कृपा न हो।

## जीवन की कमजोरियों को दूर करना

गणेश जी हमारे जीवन से कमजोरियों और कमियों को दूर करने की शक्ति प्रदान करते हैं। मनुष्य की आठ प्रमुख कमजोरियाँ हैं जिनसे वह हमेशा मार खाता है। इन कमजोरियों पर विजय प्राप्त करने के लिए गणेश जी ने भी आठ रूप लिये हैं, जो अष्टविनायक के नाम से जाने जाते हैं। इनमें हर एक रूप एक कमजोरी को दूर करने के लिए हमारा सहायक बनता है।

गाणपत्य तंत्र में कहा गया है कि सबसे पहले इन कमजोरियों को हम जान लें, और फिर यह समझें कि गणेश जी कैसे इन कमजोरियों को दूर करने के लिए हमें सहायता प्रदान करते हैं। पहली कमजोरी है मद, जिसका मतलब होता है घमण्ड। यह एक सूक्ष्म अनुभूति है चेतना की, जिसको कोई पकड़ नहीं सकता है। वह अपने ही आप बढ़ते रहता है, और उसको बढ़ते कोई नहीं देखता कि मेरा मद बढ़ रहा है। लेकिन जब वह अपना डंडा चलाता है तो सब उससे विचलित हो जाते हैं। इसलिए मद एक कमजोरी है, जिसको दूर करना पड़ता है।

दूसरी कमजोरी है अभिमान। अस्तित्व का जो एक अभिमान होता है कि मैं एक विशिष्ट व्यक्ति हूँ, मेरी यह क्षमता है, मेरी यह स्थिति है, मेरी यह समृद्धि है, इसका जो अभिमान रहता है, वह मद के दूर होने पर भी बीज रूप में मनुष्य की चेतना में रहता है। इस अभिमान को दूर करने के लिए भी गणेश जी की सहायता चाहिए।

तीसरी कमजोरी होती है मात्सर्य, जिसका अर्थ होता है ईर्ष्या या प्रतिस्पर्धा की भावना। ईर्ष्या तो हर व्यक्ति के जीवन में छिपी है, और वह तब प्रकट होती है जब हम अपने जीवन के अभाव और दूसरे के जीवन में उपलब्धि को देखते हैं। ईर्ष्या के साथ प्रतिस्पर्धा की भावना भी प्रकट होती है कि मैं किस प्रकार दूसरे से आगे बढ़ जाऊँ।

चौथी कमजोरी है मोह, मोहग्रस्त होकर अपने विवेक को खो बैठना। पाँचवी कमजोरी है लोभ, छठी कमजोरी है क्रोध, सातवीं है काम और आठवीं है ममता। गणेश जी के जो आठ रूप हैं, वे इन्हीं कमजोरियों को दूर करने में सहायता देते हैं। इसलिए उनकी आराधना की जाती है।

## आराधना के तीन रूप

हमारे शास्त्रों में आराधना के तीन रूप बताए गए हैं। पहला रूप होता है कर्म-काण्ड का, दूसरा होता है उपासना का और तीसरा होता है ज्ञान का। सामान्य रूप से लोग कर्म-काण्ड में ही अपने आप को भूल जाते हैं, उपासना को छोड़ देते हैं और ज्ञान को तो त्याग ही देते हैं। कहते हैं कि कर्म-काण्ड में जो करता हूँ वही पर्याप्त है। लेकिन ये तीनों देव आराधना के अभिन्न अंग होते हैं – कर्म-काण्ड, उपासना-काण्ड और ज्ञान-काण्ड।

इन तीन कर्मों को प्रतीक अथवा विग्रह की आवश्यकता होती है जो रूप को दर्शाता है, प्रत्यक्ष करता है। विग्रह, चित्र या प्रतीक, एक रूप को प्रत्यक्ष करेगा। जब रूप प्रत्यक्ष हुआ, तब उस रूप से हमारा संबंध जुड़ता है कि ये फलाने देवता हैं। नाम और रूप, इन दोनों की आवश्यकता पड़ती है आराधना में। चाहे वह कर्म-काण्ड हो, उपासना-काण्ड हो या ज्ञान-काण्ड, बिना नाम और रूप के किसी से आराधना संपन्न नहीं हो पाती है।

हमारे भीतर मद, अभिमान, मात्सर्य, मोह आदि जो आठ कमजोरियाँ हैं, उनको संभालने के लिए, उनको परिवर्तित करने के लिए श्री गणेश के आठ रूपों की चर्चा यहाँ पर होती है, जो अष्टविनायक के नाम से जाने जाते हैं। मद को दूर करने के लिए गणेश जी का एकदन्त रूप है। अभिमान को दूर करने के लिए धूम्रवर्ण रूप है। मात्सर्य को दूर करने के लिए वक्रतुण्ड रूप पर ध्यान करना पड़ता है। मोह को दूर करने के लिए महोदर के रूप पर ध्यान करना पड़ता है। लोभ को दूर करने के लिए गजानन के प्रतीक पर ध्यान करना पड़ता है। क्रोध को दूर करने के लिए लम्बोदर का ध्यान करना पड़ता है। काम को दूर करने के लिए विकट रूप पर ध्यान लगाना पड़ता है और ममता को दूर करने के लिए विघ्नराज स्वरूप का ध्यान करना पड़ता है।

हमारे शास्त्रों में गणेश जी के ये आठ प्रतीक दिए गए और कहा गया कि इन प्रतीकों का उपयोग करके तुम अपने जीवन की कमजोरियों को दूर करो, समाप्त करो। कमजोरियों को दूर करना ऐसा ही कृत्य है जैसे हम अपने कमरे की सफाई करते हैं, क्योंकि ये सब कमजोरियाँ हमारे मन की धूल हैं। जब तक कमरे में धूल छाई है, बिस्तर पर धूल पड़ी है, जमीन पर धूल है, आईने पर धूल है, गिलास में धूल है, थाली में धूल है, हम किस वस्तु का सही तरीके से उपयोग कर पाएँगे? अगर थाली का उपयोग करते हैं, तो उससे पहले धूल को हटाएँ, साफ करें। अगर आईने में अपने चेहरे को देखना है तो आईने को

पहले साफ करें, धूल हटाएँ। ये जो आठ कमजोरियाँ हैं हमारे जीवन की, ये वास्तव में मन के ऊपर धूल की परतें हैं। एक-एक परत को हटाने के लिए इन आठ रूपों पर ध्यान लगाना पड़ता है।

## कर्म-काण्ड

वैदिक वांङ्मय में कहा गया कि गणेश आराधना पहले कर्म-काण्ड के द्वारा होती है। कैसे? एक प्रतीक को रख लो सामने, चाहे उनकी मूर्ति हो या चित्र हो या अन्य कोई प्रतीक हो, और उस प्रतीक की पूजा पाँच तत्त्वों से करो। ये तत्त्व कौन-से हैं? मूर्ति पदार्थ है, तो उस पर हम लोग टीका लगाते हैं। टीका पदार्थ का, पृथ्वी तत्त्व का स्वरूप हुआ। हमलोग जो फूल वगैरह चढ़ाते हैं, वह भी पृथ्वी का प्रतीक है। तो चाहे टीका लगाओ, चाहे फूल चढ़ाओ, दोनों पृथ्वी तत्त्व के प्रतीक हैं। उसके बाद जल-प्रोक्षण करो, जल तत्त्व अर्पित करो। फिर दीपक दिखाओ। दीपक में जो ज्योति जल रही है, वह अग्नि तत्त्व का प्रतीक है। उसके बाद अगरबत्ती, जो वायु तत्त्व का प्रतीक है। अंत में मंत्र पाठ करो, यह आकाश तत्त्व से आराधना है, क्योंकि शब्द आकाश का गुण है। इस तरह कर्म-काण्ड में इन पाँच तत्त्वों के द्वारा हम गणेश जी की आराधना करते हैं। यह हुआ हमारा बाह्य कर्म। हमारा मन उस बाह्य कर्म से



एकाकार हो जाता है और उस स्वरूप को आत्मसात् करने लगता है। मन उस देव-प्रतीक के साथ एक हो जाता है। यह है कर्म-काण्ड का प्रयोजन।

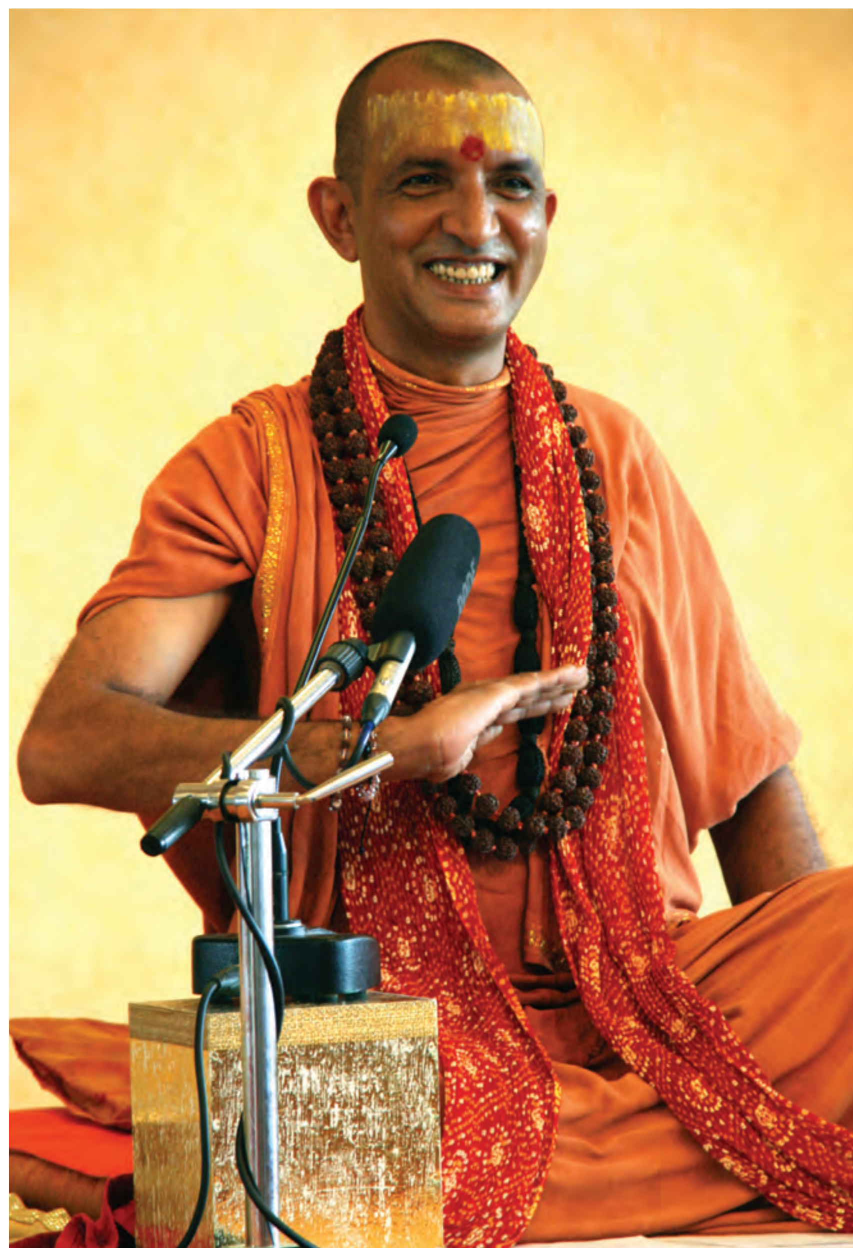
**उपासना-काण्ड**

अब हम आते हैं वैदिक शास्त्रों में बताई गई उपासना की ओर। उपासना और कर्म-काण्ड, ये दोनों अलग हैं। अगर कर्म-काण्ड बाह्य है तो उपासना मानसिक और आन्तरिक है। उपासना को सिद्ध करने के लिए यह आवश्यक होता है कि हम अपनी इन्द्रियों और मन को संसार से हटा लें। उसके लिए क्या करना होगा? ध्यान लगाना होगा। एकान्त में पाँच-दस मिनट के लिए शांतिपूर्वक बैठ जाओ और बैठकर अपनी इन्द्रियों को संसार के विषयों से समेटकर, बंद आँखों के सामने भ्रूमध्य पर भगवान के स्वरूप का ध्यान करते हुए मंत्र का जप करो। मंत्र का जप करने से पूर्व अपने जीवन से एक कमी, एक कमजोरी को दूर करने का संकल्प ले लो, एक दुःख को दूर करने का संकल्प ले लो, और उसी को प्रधान विचार बनाकर ध्यान करो। जब ऐसी आराधना होगी तो गणेश जी उस दुःख को, उस बाधा को दूर करने के लिए आपकी सहायता करेंगे, उपासना में ऐसी मान्यता है। जब कहा जाता है कि जीवन की कमजोरियों को दूर करने के लिए गणेश जी के इन विभिन्न रूपों पर ध्यान किया करो और उनके मंत्र का जप किया करो, तो यह उपासना का अंग बनता है। कुछ समय के लिए शान्तिपूर्वक आँखें बंद करके एकान्त में बैठोगे और आत्म-सजगता के द्वारा, आत्म-निरीक्षण के द्वारा अपनी मन:स्थिति को समझने का प्रयास करोगे तो वह हो जाता है प्रत्याहार का अभ्यास।

हमलोग बैठ करके जो चिंतन करते हैं न, जैसे परिवार में कोई बिमार पड़ गया तो हम कुर्सी पर बैठकर उसके बारे में सोच रहे हैं कि क्या उपाय हो सकता है, वहाँ भी प्रत्याहार की ही स्थिति है। जब अपने बेटा-बेटी की शादी के बारे में चिंतन करते हैं, तो वह भी प्रत्याहार की ही अवस्था है, क्योंकि उस समय उसके अतिरिक्त मन में कोई दूसरा विचार नहीं आता है। मन एक विचार में ही अपने आप को केंद्रित कर देता है। चिंतन में मन प्रत्याहार की अवस्था को स्वाभाविक रूप से प्राप्त करता है, लेकिन आप उस चीज को समझते नहीं हो।

यह वही अवस्था है जिसको हम ध्यान में प्राप्त करते हैं, पर वहाँ चिंतन का स्वरूप बदल जाता है। चिंतन आत्म-परीक्षण, आत्म-निरीक्षण और

















आत्म-विश्लेषण का रूप ले लेता है जहाँ हम एक चीज को पकड़कर उसकी गहराई में जाते हैं। जैसे हमारे भीतर कितना अहंकार है, उसको साक्षी भाव से, द्रष्टा भाव से हम देखने का प्रयास करें कि यह अहंकार हमें कहाँ पर चोट मारता है, कब चोट मारता है, क्यों चोट मारता है, यह किस अपेक्षा से जुड़ा हुआ है, किस विचार से जुड़ा हुआ है? जब इस प्रकार का एक आत्म-निरीक्षण हो जाता है और हम संकल्प लेते हैं कि हम अपने अहंकार को कम करेंगे, अपने मद को कम करेंगे, तब उस संकल्प को लेकर अपने मन में गणेश के एकदन्त स्वरूप का ध्यान करते हुए मंत्र का जप करो। हर मंत्र के साथ यह विचार करो कि भगवान मेरी सहायता करो, मेरे मद को दूर करो।

गणेश जी का बीज-मंत्र है 'गं' और उनका जो पूरा मंत्र है वह है 'ॐ गणपतये नमः'। बीज-मंत्र और सामान्य मंत्र, दोनों को जोड़ा जा सकता है और वह बन जाता है – *ॐ गं गणपतये नमः*। इस मंत्र की हर आवृत्ति के साथ अनुभव करो कि भगवान गणेश के एकदन्त स्वरूप की कृपा आपको प्राप्त हो रही है। ऐसा छः महीने तक, पूर्ण सजगता के साथ, नियमित रूप से करोगे तो पाओगे कि आपका अहंकार कम हो रहा है।

ये केवल मनगढ़ंत बातें नहीं, शास्त्रों की बातें हैं। ये अनुभूत सत्य हैं जिन्हें साधुओं, संन्यासियों और त्यागियों ने अनुभव किया है। उन्होंने अपने मन को एकाग्र किया है, मंत्र का जप किया है, स्वरूप का ध्यान किया है और अपनी कमजोरी को दूर करने में सफल हुए हैं।

इसी प्रकार धूम्रवर्ण स्वरूप या वक्रतुण्ड स्वरूप या अन्य स्वरूपों का ध्यान करते हुए उपासना के माध्यम से हम इन कमजोरियों को दूर कर सकते हैं। जब ये कमजोरियाँ दूर हो जायेंगी तब मनुष्य को गणेश जी की कृपा से स्थिर बुद्धि प्राप्त होगी। हाथी को आपने देखा होगा, वह कुछ भी काम हड़बड़ी में नहीं करता। आराम से, धीरे-धीरे, सोच-समझकर काम करता है। और गणेश जी ने भी हड़बड़ी में आज तक कुछ काम नहीं किया है। वे भी अपना समय लेते हैं, बहुत सोच-समझकर विवेकपूर्ण कर्म करते हैं, अविवेकी कर्म नहीं। अगर उनसे विवेकपूर्ण कर्म नहीं होगा तो सामने भी नहीं आयेंगे, पीछे ही रहेंगे, क्योंकि उनका वह स्वभाव है ही नहीं। धैर्य के साथ उपासना करने से मनुष्य समबुद्धि को प्राप्त करता है, ऐसा योग का अटल मत है। लेकिन हमलोगों में धैर्य है ही नहीं। भगवान से प्रार्थना करते हैं कि भगवान, मुझे धैर्य प्रदान करो, अभी तुरंत! एक तरफ धैर्य की प्रार्थना भी



करते हैं और साथ ही कहते हैं कि अभी जल्दी से दे दो! इसमें धैर्य कहाँ है? धैर्य बुद्धि और विवेक बुद्धि, ये गणेश-कृपा के परिणाम हैं।

जब धैर्य बुद्धि और विवेक बुद्धि, दोनों प्राप्त होते हैं तब आपके मुख से उचित वाणी निकलती है, आप उचित कर्म करते हैं, आपके जीवन में उचित व्यवहार होता है। जब वाणी, कर्म और व्यवहार उचित होने लगते हैं, तो जीवन की कलुषता समाप्त होती है। जीवन की कलुषता का पहला प्रभाव, उसकी पहली अभिव्यक्ति या तो वाणी में दिखलाई देगी या कर्म में या फिर व्यवहार में। अगर क्रोध आ जाए तो कहाँ पर दिखलाई देगा, अगर ईर्ष्या हो तो कहाँ दिखलाई देगी? जब ये दुर्बलताएँ हमारी जीवन से निकल जाती हैं तब वाणी, कर्म और व्यवहार, तीनों का संतुलन होता है। तीनों का संतुलन होने के पश्चात् फिर गणेश जी प्रसन्न होकर मूलाधार का दरवाजा खोलते हैं और आप मूलाधार के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं, शक्ति की आराधना करते हैं और आपके उस आवाहन से शक्ति भी प्रसन्न हो जाती है, जागृत हो जाती है।

हमारी वैदिक परंपरा में यह कहा गया है कि गणेश जी मानसिक स्पष्टता प्रदान करते हैं, आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश दिलाते हैं, प्राणों को संतुलित करते हैं, रक्षा करते हैं, अहंकार का नाश करते हैं, विनम्रता प्रदान करते हैं,

ज्ञान की वृद्धि करते हैं और अभावों को दूर करके अकेलेपन को समाप्त करते हैं। ये गणेश जी के वरदान होते हैं, उस व्यक्ति के लिए जो उनकी उपासना सही भावना से करता है।

कर्म-काण्ड तो बहुत सरल है, पाँच मिनट में आप गणेश जी की आराधना कर्म-काण्ड के द्वारा कर सकते हैं। फूल चढ़ाओ, जल प्रोक्षण करो, दीपक जलाओ, अगरबत्ती घुमाओ और मंत्र पाठ करो। हाँ, क्रम बदल सकते हो, मैं तो तत्त्वों के क्रम के अनुसार कह रहा हूँ, लेकिन आप सामान्य, प्रचलित क्रम के अनुसार चल सकते हैं। पहले जल प्रोक्षण होता है, उसके बाद फूल, टीका वगैरह होता है, फिर धूप बतलाते हैं, उसके बाद ज्योति दिखाते हैं, मंत्र पाठ होता है, यह सामान्य विधि है। जिस भी विधि से हो, हमें इस आराधना को करना है ताकि हमारा मन उस विग्रह से, उस स्वरूप से एकाकार हो जाय, हमारा मन उस स्वरूप को आत्मसात् करे।

कर्म-काण्ड करने के बाद दस-पंद्रह मिनट के लिए शांति से बैठ जाओ और अपने भीतर इन आठ कमजोरियों को, इन आठ शत्रुओं को अपने सामने खड़ा देखो। एक को पकड़ो कि मैं आज तुम्हारे साथ संघर्ष करूँगा और तुम पर विजय प्राप्त करूँगा। एक शत्रु को पकड़कर, एक कमजोरी को पकड़कर फिर गणेश जी के उस स्वरूप का ध्यान करो जो उस शत्रु, उस कमजोरी पर विजय दिला सकता है, और इस भावना के साथ मंत्र का जप करो कि मेरे जीवन की यह दुर्बलता आपकी कृपा से समाप्त हो जाए, दूर हो जाए। इस प्रकार पंद्रह मिनट की उपासना कर लो।

हम तो सुझाव देंगे कि एक-एक सप्ताह एक-एक कमजोरी को पकड़ लो। हर सप्ताह एक कमजोरी को पकड़ो और पूरे सप्ताह भर उस कमजोरी को कमजोर बनाते जाओ। वह कमजोरी अभी आपको कमजोर बना रही है, लेकिन आप अपनी संकल्पशक्ति से, अपनी आराधना से उस कमजोरी को कमजोर बनाते जाओ, ताकि एक दिन वह गायब हो जाए। ये सब अनुभूत बातें आपको बता रहा हूँ जिनकी साधना करके हमारे योगियों ने आत्मिक शांति, ज्ञान और दर्शन को प्राप्त किया है।

इसके लिए संसार को छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। गणेश जी तो संसार में ही रहने वाले देवता हैं, उनको तो बड़ा आनंद आता है संसार में। गणेश जी को सुख-सुविधा बहुत पसंद है। इसलिये हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि अगर कलियुग में किसी की आराधना करनी है तो इस युग के देवता

हैं गणेश और देवी हैं चण्डी – *कलौ चण्डीविनायकौ*। इन्हीं दो की आराधना करनी है और अगर आप जनसामान्य की मानसिकता को भी देखोगे तो लगता है कि बात एकदम सही है, क्योंकि जब गणेश जी आते हैं घर में तो अच्छा भोजन आता है, अच्छे कपड़े आते हैं, ठाठ-बाट आता है और जब अच्छा भोजन मिलता है, आराम मिलता है तो सब लोगों का उदर भी गणेश जी के समान ही दिखने लगता है!

**ज्ञान-काण्ड**

अब तीसरा बिंदु है ज्ञान-काण्ड का। वैदिक परम्परा के अनुसार आराधना के कर्म-काण्ड में पाँच तत्त्वों को अर्पित करना है, उपासना-काण्ड में एक कमजोरी को लेकर उस पर ध्यान करते हुए दूर करने का प्रयास करना है, और ज्ञान-काण्ड में पहली चीज है सजगता को कायम रखना। जो लोग रस्सी पर चलकर कमाल दिखाते हैं, उनकी सजगता कैसी होती है, जरा सोचिए। हर क्षण एकदम ख्याल रहता है कि मेरा पैर कहाँ पड़ रहा है, और अगर ख्याल नहीं रहे, मन भाग जाए इधर-उधर तो पैर रस्सी पर नहीं पड़ेगा, हवा पर ही पड़ेगा और आदमी गिर जाएगा। रस्सी पर चलनेवाला नट इन्द्रियों और मन की पूर्ण सजगता को रखते हुए रस्सी पर चलता है। इन्द्रियों और मन पर उसका पूर्ण नियन्त्रण होता है।

संसार में भी वैसे ही चलना पड़ता है जैसे नट रस्सी पर चलता है। संसार में हमें चोट लगती है, संसार में हमारा खून बहता है, दर्द से, क्लेश से परेशान होते हैं, और संसार में ही उपलब्धि भी होती है। सब कुछ तो यहीं होता है। तो क्यों न हम सँभल कर चलें ताकि हमें किसी प्रकार का कष्ट न हो, दर्द न हो, और सुखपूर्वक हम इस रस्सी पर चलकर दूसरे छोर पर पहुँच जाएँ।

उपनिषदों में कहा भी गया है कि आध्यात्मिक मार्ग एक छुरे की धार की तरह तेज है। अगर सही प्रकार से कदम पड़ेगा तो तुम छुरे पर भी चल सकते हो, पर गलत कदम पड़ेगा तो छुरा तुम्हारे पैर को काट देगा और तुम्हें अपंग बना देगा। यह बात कहकर हमारे ऋषि क्या संकेत दे रहे हैं? यही कि इस जीवन में सजगतापूर्वक और सावधानीपूर्वक जीने का प्रयास करो। मनुष्य अपनी असावधानी से ही मार खाता है, दुःख को प्राप्त करता है। अगर हम सावधान होकर चलें तो जीवन में केवल सुख, पूर्णता और शान्ति है। इस बात को याद रखना। जब लोग मुझसे कहते हैं कि मैं अपने जीवन में प्रसन्न



नहीं हूँ, तो उसी वाक्य से मालूम पड़ जाता है कि यह व्यक्ति असावधान है। और जब लोग आकर कहते हैं कि मेरे पास सबकुछ है, मैं तृप्त हूँ, तो मालूम पड़ जाता है कि यह व्यक्ति सावधान है। शब्दों से मालूम पड़ जाता है।

इसलिए ज्ञान-काण्ड में सजगता को प्राथमिकता दी गयी है, कहा गया है कि फूँक-फूँक कर कदम रखो। किस चीज की सजगता होनी चाहिए? जो चीज हमारे लिए दुःखदायी है और जो चीज हमारे लिए सुखदायी है, दोनों के प्रति सजग होकर दुःखदायी को अपने से अलग रखो और सुखदायी को प्राप्त करने का प्रयास करो। सरल-सा सिद्धान्त है।

दुःख किससे मिलेगा? जो बुराई है उससे दुःख मिलता है। सुख किसमें मिलेगा? जो अच्छाई है उससे सुख मिलेगा। बुराई से हम अपने आपको कैसे दूर रखें? बुराई बाहर से नहीं आती है, अपने भीतर ही प्रकट होती है। जब बुराई अपने भीतर प्रकट होकर हमारे आचरण को प्रभावित कर देती है तो दुःख सामने आता है। उसी प्रकार अच्छाई भी हमारे भीतर प्रकट होती है, और जब अच्छाई प्रकट होकर हमारे कर्मों को निर्देशित करती है, तो सुख सामने आता है।

ज्ञान-काण्ड में इस सजगता का होना आवश्यक है कि मैं अपने आपको उन चीजों से, परिस्थितियों से, विचारों से, व्यवहारों से दूर रखूँ, जो कष्टदायी हैं, दुःखदायी हैं, क्लेशदायी हैं और ऐसी चीजों का अनुसरण करूँ, ऐसी

चीजों को प्राप्त करूँ, ऐसी चीजों को ग्रहण करूँ, जिनसे जीवन में सुख, शान्ति और पूर्णता की वृद्धि होती है। ज्ञान-काण्ड में मनुष्य को हमेशा अपने व्यवहार के प्रति सजग रहना चाहिए, और इसीलिये हमारे शास्त्रों में कहा गया कि छोटी-छोटी चीजों को अपने आचरण में लाने का प्रयास करो।

उदाहरण के लिए, *सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्* – यह एक छोटा-सा सूत्र है जिसमें कहा गया है कि सच बोलो, प्रिय बोलो पर ऐसा सच मत बोलो, जो दूसरों के लिये अप्रिय हो। युधिष्ठिर ने एक बार एक अप्रिय सच कहा था, जिसके कारण उनका रथ धरती पर आ गया। आपने कहानी में पढ़ा होगा कि जब महाभारत का युद्ध हो रहा था तब युधिष्ठिर का रथ धरती से चार अंगुल ऊपर चला करता था क्योंकि युधिष्ठिर सत्यवादी थे और सत्य की शक्ति के कारण उनका रथ धरती का स्पर्श नहीं करता था।

लेकिन युधिष्ठिर ने एक बार एक अप्रिय सत्य कह दिया। किसको? गुरु द्रोणाचार्य को – *अश्वत्थामा हतोहतः, नरो वा कुञ्जरो वा* – अश्वत्थामा मरा है, यह तो जोर से कहा, लेकिन नर है या पशु, मैं नहीं जानता, यह धीरे-से कहा। द्रोणाचार्य ने तो सुना नहीं, उन्होंने केवल एक ही वाक्य सुना – *अश्वत्थामा हतोहतः*। उन्होंने शस्त्र त्याग दिये और जब उनका वध किया गया, उसी समय युधिष्ठिर का रथ धरती पर आ गया। प्रिय सत्य नहीं, अप्रिय सत्य जो कहा था।

मैं इस दृष्टान्त से यह बतलाना चाह रहा हूँ कि सद्गुणों में एक ऐसी ऊर्जा और क्षमता होती है, जिससे मनुष्य का उत्थान सम्भव हो जाता है, जबकि दुर्गुणों से मनुष्य का पतन ही होता है। ज्ञान-काण्ड में इन्हीं दोनों के भेद को जाना जाता है, समझा जाता है। एक को अपनाया जाता है और दूसरे को नकारा जाता है। अच्छाई को अपनाना, बुराई को नकारना – यह हुआ ज्ञान-काण्ड। कर्म-काण्ड है अपने मन को अपने आराध्य से जोड़ देना, और उपासना-काण्ड है आत्म-विश्लेषण, आत्म-परीक्षण, आत्म-निरीक्षण के द्वारा भीतर के एक शत्रु पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करना। वैदिक पद्धति में इस प्रकार इन तीनों के माध्यम से आराधना को समझाया गया है।

इसी क्रम से अगर हम गणेश जी की उपासना करेंगे तो हमारी बुद्धि भौतिक स्तर से ऊपर उठकर परमात्म तत्त्व से जुड़ जाएगी और इसके बाद जीवन में मंगल ही मंगल, शुभ ही शुभ होता है। अप्रिय या अशुभ का अस्तित्व नहीं रहता। यह वैदिक मान्यता के अनुसार गणेश आराधना है।

# तांत्रिक गणपति आराधना

## चेतना के अनुभव का विस्तार

*19 अगस्त 2012*

हमारे शास्त्रों में ईश्वर को निराकार और साकार, दोनों रूपों में देखा गया है। जब हम गणेश जी के चित्र या मूर्ति को देखते हैं तो वह हुआ उनका साकार स्वरूप। अगर हम शिव जी को ध्यानस्थ बैठा देखते हैं या त्रिशूल को हाथ में लिये खड़ा देखते हैं, तो वह होता है उनका साकार स्वरूप। लेकिन इस साकार स्वरूप के अतिरिक्त एक दूसरा रूप भी होता है, जिसको कहते हैं निराकार। निराकार की पहचान नहीं होती है, क्योंकि वह किसी आकार में बाँधा नहीं जा सकता। लेकिन निराकार का एक प्रतीक अवश्य होता है। जिस शिवलिंग पर आप मंदिरों में जाकर जल चढ़ाते हो, वह शिव जी के निराकार स्वरूप का प्रतीक है। आखिर अगर हम निराकार के बारे में चिंतन भी करें तो किसी एक विषय को लेकर, किसी एक बिंदु को लेकर हमें अपने मन को टिकाना आवश्यक होगा। अब शिव जी निराकार हैं, उन पर ध्यान करने के लिए कहें तो किस पर करोगे? गणेश जी निराकार हैं, उन पर ध्यान करने को कहेंगे तो किस पर ध्यान करोगे? शून्य पर? आकाश में खाली है सब।

इसलिए हमारे ऋषि-मनीषियों ने निराकार को एक आकार नहीं, बल्कि एक प्रतीक प्रदान किया। इस प्रतीक पर तुम ध्यान करते हुए निराकार तत्त्व का अनुभव कर पाओगे। शिव जी का साकार रूप हुआ उनका शरीर। वे ध्यान में बैठे हैं, बाघम्बर पहना है, गले में सर्प की माला है, ललाट पर तीसरी आँख है, सिर पर जटा है जिससे गंगा निकल रही है – यह हुआ उनका साकार रूप। इसी तरह गणेश जी छोटे हैं, मोटे हैं, हाथी जैसी सूँड है, हाथी का सिर है, लम्बे कान हैं – यह हुआ उनका साकार स्वरूप।

लेकिन जब इनके निराकार अस्तित्व की चर्चा होती है, तो हम किस प्रतीक पर, किस स्वरूप पर ध्यान लगायें? निराकार पर तो आज तक कोई ध्यान नहीं लगा पाया है। साधु भी नहीं लगा पाया है और साधु की बात तो छोड़ो, भगवान भी नहीं लगाते हैं निराकार पर ध्यान। शिवजी आखिर किसका ध्यान करते हैं, बतलाओ! निराकार राम का ध्यान करते हैं या साकार राम का? साकार राम। सीधी-सी बात बोल रहा हूँ, ईश्वर भी निराकार में अपना ध्यान केंद्रित नहीं करते हैं, एक सिद्ध या योगी भी निराकार का ध्यान नहीं कर पाता है, क्योंकि निराकार आकारविहीन है।

यहाँ पर आता है प्रतीक का महत्त्व। शिव जी का प्रतीक हुआ शिवलिंग, और यह शिव-शक्ति दोनों का संयुक्त रूप है। अरघा शक्ति का रूप है, और लिंग शिव स्वरूप है। इसी प्रकार से गणेश जी का निराकार रूप कौन-सा होता है? स्वस्तिक का।

## स्वस्तिक का सिद्धान्त

स्वस्तिक एक यंत्र है। वह केवल चार लकीरों का समूह नहीं है, जिसे आपने इधर से उधर खींच दिया है। यह अपने आप में एक यंत्र है और इस यंत्र की अपनी एक विचारधारा है, अपना एक सिद्धांत है। इस सिद्धांत का सम्बन्ध हमारे जीवन के साथ है, क्योंकि स्वस्तिक की जो चार लकीरें होती हैं, वे जीवन के चार पुरुषार्थों – अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष की प्रतीक हैं। जब स्वस्तिक चक्कर काटता है तब यह प्रतीक एक चक्र के रूप में दिखलाई देता है, जीवन का काल-चक्र, जन्म और मृत्यु का चक्र। जन्म और मृत्यु के चक्र में मनुष्य अपने चार पुरुषार्थों को करते हुए दिव्यता को, ईश्वरत्व को प्राप्त कर सकता है। यही स्वस्तिक गणेश जी का प्रतीक है और गणेश जी हमारे जीवन से बहुत गहरा सम्बन्ध रखते हैं। सभी देवताओं में यही एक देवता हैं जो भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं।



इस तथ्य को एक और ढंग से समझाता हूँ। भगवान शिव ने तो कभी धरती पर अवतार लिया नहीं, जबकि भगवान नारायण ने अनेक अवतार लिये हैं। शास्त्रों में उनके

24 अवतार माने जाते हैं, और इन 24 अवतारों में 10 अवतार प्रमुख माने जाते हैं। लेकिन नारायण के जितने भी अवतार हुए हैं, सब धरती पर हुए हैं। मानवता की रक्षा के लिये, साधुओं की प्रसन्नता के लिये, दुष्टों के विनाश के लिए, धर्म की स्थापना के लिए, एक सामाजिक व्यवस्था को कायम रखने के लिये, एक आदर्श को स्थापित करने के लिए भगवान नारायण का जन्म हुआ है इस मनुष्य लोक में।

लेकिन शिव जी के जन्म की चर्चा तो कहीं नहीं आती है। शिव जी ने भी वैसे ही कार्य किये हैं जैसे नारायण ने इस धरती पर किये हैं। नारायण ने धरती पर आकर राक्षसों और दानवों से युद्ध किया है और शिव जी ने भी कहीं पर त्रिपुर से युद्ध किया, तो कहीं पर अंधक से युद्ध किया। लेकिन धरातल पर नहीं, अव्यक्त अन्तरिक्ष में। यह बतलाता है कि शिव तत्त्व सूक्ष्म है, प्रकट नहीं होता। विष्णु तत्त्व स्थूल है, वह प्रकट हो जाता है। लेकिन शिव तत्त्व सूक्ष्म है, वह सूक्ष्म स्तर पर ही एक वातावरण और एक व्यवस्था को स्थापित करता है। नारायण धरती पर आकर एक वातावरण का निर्माण करते हैं, व्यवस्था बनाते हैं, और शिव आकाश में ही विरोधी तत्त्वों को शान्त करते हैं, समाप्त करते हैं। गणेश जी दोनों तरफ वाले हैं। धरती में भी इनका अस्तित्व है और अंतरिक्ष में भी। स्थूल में भी इनका अस्तित्व है और सूक्ष्म में भी। दोनों जगह के होने के कारण इनको विघ्नविनायक या विघ्नराज कहा गया है।

## सकारात्मक और नकारात्मक वृत्तियाँ

इस अव्यक्त और व्यापक सृष्टि में, तथा इस व्यक्त और सीमित जीवन में दो प्रकार की ऊर्जाओं का खेल हमेशा चलते रहता है। एक है सकारात्मक तो दूसरी है नकारात्मक। एक है दैवी तो दूसरी है दानवी। अगर दैवी ऊर्जा एक वृत्ति के रूप में एक साधु के मन में जन्म लेती है तो दानवी ऊर्जा भी एक वृत्ति के रूप में हर मनुष्य के भीतर जन्म लेती है। जब तुम्हें किसी के प्रति करुणा का आभास होता है तो करुणा का रूप उस समय क्या है? क्या वह केवल एक भावना है या एक चिंतन प्रक्रिया है या एक वृत्ति है? जब तुम्हारे भीतर प्रेम उमड़ता है तो क्या प्रेम मात्र एक भावना है या एक वृत्ति भी है? जब तुम्हारे जीवन में संतोष आता है तो उस समय क्या संतोष मात्र एक अवस्था है या जीवन की एक वृत्ति भी है? चाहे वह दिव्य गुण हो या अधम गुण, दोनों जब इस जीवन में प्रवेश करते हैं तो वृत्ति का रूप लेते हैं, और वह

वृत्ति मनुष्य के आचरण और चिंतन को प्रभावित कर देती है। जब डर लगता है तो उस डर में एक रस्सी साँप जैसा दिखलाई देती है। भय की वृत्ति ने एक रस्सी के रूप को बदल दिया! इसी तरह क्रोध भी एक वृत्ति है जो दृष्टिकोण को बदल देती है।

एक बार राम दरबार में हनुमान जी और सीता जी के बीच बहुत बहस हो गई। प्रसंग था कि अशोक वाटिका में किस रंग के फूल थे? सीता जी राम जी को अशोक वाटिका का वर्णन करते हुए कहती हैं कि वहाँ तो अलग-अलग रंगों के फूल थे, सफेद थे, पीले थे, लाल थे, नीले थे, आसमानी थे, हर प्रकार के फूल थे। लेकिन हनुमान जी कहते हैं कि मैया, आप गलत बात कह रही हैं, वहाँ तो सभी फूल लाल ही थे। दोनों के बीच जमकर बहस हो गई। सीता मैया ने कहा, नहीं, वहाँ तो हर रंग के फूल थे, और हनुमान जी भी अपनी बात पर अड़ गये कि मैया मैंने तो पूरी वाटिका को देखा है, सब जगह केवल एक ही रंग के फूल थे और वे सब लाल थे।

विवाद बढ़ता गया और अंत में राम जी को हस्तक्षेप करना पड़ा। राम जी ने कहा कि सीता भी सही है और हनुमान भी सही है। दोनों दुविधा में पड़ गये कि भगवान दोनों को सही कह रहे हैं, यह कैसे संभव है? क्या भगवान किसी एक का पक्ष लेना नहीं चाहते? तब राम जी कहते हैं कि सीता, तुम्हारी सोच सही है कि वहाँ पर हर रंग के फूल लगे थे, और हनुमान से कहते हैं कि तुम्हारा भी दृष्टिकोण ठीक है क्योंकि जब तुम वहाँ गये थे तो क्रोध से तुम्हारी आँखें लाल थीं, इसलिए तुम्हें सब चीजें लाल ही दिखलाई दीं!

मैं बतला रहा था कि दैवी और आसुरी गुण हम में समान रूप से विद्यमान हैं, और दोनों का स्वरूप वृत्ति का होता है। अगर प्रेम और करुणा का स्वरूप वृत्ति का है, तो आक्रोश, चिंता और भय भी वृत्तियाँ हैं। और गणेश जी दोनों के बीच खड़े हैं। जब नकारात्मक वृत्ति सकारात्मक पर आरूढ़ हो जाती है, तो गणेश जी उस नकारात्मक वृत्ति से कहते हैं कि यहाँ पर मत जाओ, वे द्वारपाल का काम करते हैं, और जब सकारात्मक वृत्ति अपने आप को नकारात्मक पर आरोपित करना चाहती है, तो गणेश जी प्रेरणा देते हैं कि जल्दी से जाओ, उसको बदलो।

संकटमोचन हनुमान जी का एक नाम है, और विघ्नहरण गणेश जी का नाम है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं, और दोनों शिव परिवार के ही हैं। हनुमान जी ग्यारहवें रुद्र हैं और गणेश जी शक्ति के मानस पुत्र हैं। दोनों का एक ही



काम है, एक संकट को दूर करते हैं, तो दूसरे विघ्न-बाधाओं को दूर करते हैं। लेकिन जो भी विघ्न और बाधाएँ होती हैं, वे सामाजिक और बाह्य नहीं होतीं, वे आन्तरिक होती हैं। हर व्यक्ति के जीवन में जो भी विघ्न या बाधाएँ आती हैं, वे सब मनुष्य की अपनी कृतियाँ हैं, उपज हैं। आप खेत में जो बीज लगाते हो, वही बीज तो पनपेगा। जन्म-जन्म से हमलोगों ने ईर्ष्या और घृणा का बीज अपने मन में बोया है, तो वही बीज आज पनपता है हमारे भीतर। बिना जाने-समझे ईर्ष्या हो जाती है, बिना जाने-समझे अहंकार आ जाता है, बिना जाने-समझे क्रोध आता है, बिना जाने-समझे सब कुछ होता है, और हम उसमें तिलमिला जाते हैं।

### गणेश आराधना

गणेश आराधना की चर्चा करने वाले शास्त्रों में बतलाया गया है कि आठ प्रकार के शत्रु हमारे भीतर विद्यमान हैं, और ये आठ शत्रु हमारी आध्यात्मिक प्रगति में बाधक हैं। वैदिक दर्शन में इन आठ शत्रुओं – मद, अभिमान, मात्सर्य, क्रोध, लोभ, मोह, काम और ममता को समाप्त करने के लिए गणेश जी की आराधना की जाती है। जब ये आठ शत्रु समाप्त हो जाते हैं तो

हमारा भौतिक जीवन भी अच्छा, सुखदायी और प्रेरक होता है, तथा हमारे आध्यात्मिक जीवन का भी विकास होता है।

साधकों का प्राय: यह अनुभव रहता है कि जब भी वे आध्यात्मिक साधना करना चाहते हैं तो इनमें से एक शत्रु आकर हमला कर देता है। कभी अहंकार हमला कर देगा या फिर क्रोध हमला कर देगा या कभी काम हमला कर देता है तो कभी मद और मात्सर्य हमला कर देते हैं। ये हमला करके हमें पुनः पीछे खींच लाते हैं, हम आगे नहीं बढ़ पाते। वेदों में इन आठ नकारात्मक अभिव्यक्तियों को शत्रु का दर्जा दिया गया है, और कहा गया है कि गणेश आराधना करके इन शत्रुओं पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

हमने आपको बतलाया है कि वैदिक आराधना के तीन रूप होते हैं – कर्म-काण्ड, जो बाह्य क्रिया है; उपासना-काण्ड, जो मानसिक क्रिया है; और ज्ञान-काण्ड, जो चेतना के दरवाजों को खोल कर उस परमतत्त्व से एकाकार कर देता है। आराधना के ये तीन रूप होते हैं, और तीनों को साथ में लेकर चलना पड़ता है। कर्म-काण्ड अलग नहीं है उपासना से, कर्म-काण्ड और उपासना अलग नहीं हैं ज्ञान से – तीनों का अभ्यास एक साथ होना चाहिए।

हमलोग बहुत कर्म-काण्डी हो गए हैं। मूर्त्ति पर हड़बड़ी में फूल फेंक देते हैं, जल छिड़क देते हैं, अगरबत्ती दिखा देते हैं और यह सोचकर निकल जाते हैं कि हमारी पूजा हो गई। लेकिन वह पूजा तो आपने एक तिहाई की है, दो



तिहाई पूजा तो बाकी रह गई है। यह तो वैसा ही हुआ जैसे केवल पतलून पहनकर काम पर चले जाओ, और सोचो कि मैंने पूरा कपड़ा पहन लिया है। ऊपर की कमीज तो पहने ही नहीं हो। अरे, कपड़ा पहनना है तो पूरा पहनो, सुंदर दिखो। और सुंदर कब दिखोगे? जब तुम कर्म-काण्ड, उपासना-काण्ड और ज्ञान-काण्ड, तीनों को एक साथ जोड़ोगे।

इसीलिए हमारी भारतीय परम्परा में कहा गया कि प्रातःकाल जब उठते हो और तुम्हारा मन चंचल नहीं रहता, शांत रहता है, संसार के विषयों से अप्रभावित रहता है, तब उस समय तुम देव आराधना कर लो। पूजा करो जो कर्म-काण्ड है। फूल चढ़ाओ, जल चढ़ाओ, दीपक दिखाओ, अगरबत्ती दिखाओ, मंत्र-पाठ करो – यह बाह्य कर्म-काण्ड हुआ। उसके पश्चात् शांति से पाँच मिनट के लिए बैठ जाओ, अपने मन में ईश्वर की, अपने आराध्य की छवि को सामने ले आओ और उस छवि पर अपने ध्यान को लगाकर मंत्र का अनुष्ठान करो। एक माला, दो माला, पाँच माला, जितना भी निर्देशित हो, वह आपकी उपासना होती है। उसके बाद चिंतन कि इस उपासना का परिणाम क्या होगा। मैं क्या चाहता हूँ, और उसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ?

केवल यह सोचना कि मुझे भोजन मिल जाय पर्याप्त नहीं है। भोजन अगर सामने भी आता है तो खुद हाथ चलाना पड़ता है। कोई दूसरा हमारे मुँह में खाना नहीं डालेगा। यही गलती हम लोग अपने दैनिक जीवन में करते हैं कि कर्म-काण्ड हो गया, पूजा हो गई, और अब भगवान से कुछ मिलता ही नहीं। मैं तो इतनी श्रद्धा के साथ इतने लंबे अरसे से आराधना कर रहा हूँ, रोज दीपक दिखाता हूँ, रोज अगरबत्ती दिखाता हूँ, रोज फूल चढ़ाता हूँ, लेकिन भगवान ने मुझे दिया ही क्या? अरे! थाली तो सामने है, लेकिन आप हाथ चला नहीं रहे हो, आप सोचते हो कि किसी चमत्कार से खाना मेरे मुँह में चला जायेगा। अगर एक बार खाना मुँह में चला जाएगा तो चबाना भी नहीं चाहोगे, सोचोगे कि चमत्कार से सीधा अंदर ही चले जाय। मतलब आदमी एकदम निकम्मा, आलसी, कमजोर और दुर्बल है। हम सब इसी श्रेणी में आते हैं।

हमलोगों का मन दुर्बल और शक्तिहीन है, इसीलिए हम अपने को कर्म-काण्ड तक ही सीमित रख पाते हैं, और एक चमत्कार की अपेक्षा रखते हैं। लेकिन हमारी परम्परा और शास्त्रों में कहा गया है कि कुछ भी प्राप्त करने के लिए प्रयास आवश्यक है, और वह प्रयास एक बार नहीं, अनेकों बार होना

है। एक बार में कोई भी चीज सिद्ध नहीं होती, बार-बार करने से ही प्रवीणता और सिद्धि प्राप्त होती है।

जब बच्चा विद्यालय जाकर अक्षर-ज्ञान प्राप्त करता है, कॉपी पर क-ख-ग लिखता है तो क्या केवल एक बार लिखने से उसको आ जायेगा? एक बार नहीं, पचास बार, पचास बार नहीं, सौ बार लिखना पड़ेगा, तब जाकर अक्षर अच्छा बनेगा। इसी अभ्यास के बारे में कहा गया है – *स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः* – जिस चीज को तुम लम्बे समय तक करते हो, जिस चीज को तुम निरंतर करते हो, जिस चीज के प्रति तुम्हारी श्रद्धा, विश्वास और आस्था है, वही साधना कहलाती है और वही साधना अंत में फल प्रदान करती है।

ये जो आठ शत्रु हमारे भीतर हैं, इनके बारे में केवल चिंतन करना और फिर अपने आप को दुःखी बना लेना कि मैं ऐसा हूँ तो वैसा हूँ, यह हमें घाटे की ओर ले जाता है। लेकिन इस शत्रु के समक्ष किसी बलवान् को अगर हम खड़ा कर दें, तो शत्रु और हमारा बलवान् साथी, दोनों आपस में भिड़ते हैं और हम निश्चिंत रहते हैं। यही तरीका वेदों में बतलाया गया है, और इन आठों को समाप्त करने के लिए श्री गणेश के आठ रूपों की चर्चा की गई है।



वैदिक परम्परा में कहा गया है कि गणेश जी के एकदन्त स्वरूप का ध्यान करते हुए और उसका मंत्र-जप करते हुए अपने मद को नष्ट किया जा सकता है। गणेश के धूम्रवर्ण स्वरूप पर ध्यान करते हुए और धूम्रवर्ण का मंत्र-जप करते हुए अभिमान को शान्त किया जा सकता है। मतलब हर एक नकारात्मक तत्त्व के लिए एक सकारात्मक शक्ति का वर्णन किया गया है, अष्टविनायक के रूप में। अष्टविनायक ही जीवन के इन आठ शत्रुओं को समाप्त करते हैं।

**तंत्रोक्त गणेश उपासना**

तंत्र शास्त्र ने इस विचारधारा को एक कदम और आगे बढ़ाया। तंत्र कहता है कि इन आठ शत्रुओं को समाप्त करने के लिए अष्टविनायक का रूप पर्याप्त है, यह बात मानते हैं। जब आप इन शत्रुओं को दूर कर देते हो तो सांसारिक जीवन सुधरता है, सामाजिक जीवन व्यवस्थित हो जाता है, क्योंकि इन शत्रुओं के समाप्त होने से फिर प्रेम और धर्म की स्थापना होती है। किन्तु जो व्यक्ति आध्यात्मिक मार्ग पर और आगे बढ़ना चाहता है, और जिसका प्रयोजन है ईश्वर की अनुभूति, उसे अपने मन की गहराई में प्रवेश करना होगा और अपनी मूल प्रवृत्तियों एवं संस्कारों का क्षय करना होगा। मूल प्रवृत्तियाँ क्या हैं? आहार, निद्रा, भय और मैथुन को मूल प्रवृत्तियाँ कहा गया है।

आहार केवल शारीरिक नहीं है, मानसिक भी है। जैसे शरीर को भोजन की आवश्यकता पड़ती है, वैसे मन को शक्ति और ऊर्जा के लिए सुख की आवश्यकता होती है। अगर मन दुःखी हो जाए तो शक्तिहीन हो जाता है। लेकिन मन अगर प्रसन्न है तो आदमी एकदम दौड़ते रहता है। इसी तरह संयम आत्मा का भोजन है। आत्मा को प्रसन्न कैसे किया जाए? संयम को अपनाकर आत्मतुष्टि होती है। मन को कैसे प्रसन्न किया जाए? सुख का दरवाजा मन के सामने खोल दो, प्रसन्न हो जाएगा। शरीर को कैसे प्रसन्न किया जाए? लड्डू सामने रख दो, लार टपकने लगेगी!

इन मूल प्रवृत्तियों का वास बहुत गहराई में रहता है। मन में आठ शत्रु तो निवास करते ही हैं, लेकिन मूल प्रवृत्तियाँ इनसे भी सूक्ष्म हैं और मन की गहराई में इनका निवास होता है। इसलिए तंत्र शास्त्र कहता है कि जहाँ पर गणेश जी की वैदिक उपासना समाप्त होती है, वहाँ से उनकी तांत्रिक उपासना आरम्भ होती है। इस बात को अच्छे से समझना। गणेश जी का सम्बन्ध वैदिक परम्परा से भी है और तांत्रिक परम्परा से भी। जैसे बेटा माता और पिता दोनों का होता है, वैसे गणेश जी वेद और तंत्र, दोनों के देवता हैं।

जब हम इन आठ शत्रुओं को शान्त कर लेते हैं, तब जाकर हम इन चार छिपे हुए तस्करों से सामना कर पाते हैं। आहार, निद्रा, भय और मैथुन भले ही मूल प्रवृत्तियाँ हों, लेकिन तस्कर भी हैं, क्योंकि वे सद्बुद्धि का हरण कर लेते हैं। कहावत भी है – *कामातुराणां न भयं न लज्जा* – जो कामातुर होता है, उसको न भय रहता है और न लज्जा होती है। जो भयभीत होता है, उसकी भी ऐसी ही स्थिति होती है। जो निद्रा में है, वह तो गायब ही रहता

है संसार से, और जो आहार की खोज करता है, पेट के सिवा कुछ दूसरा सोचता भी नहीं है।

इन मूल प्रवृत्तियों के शमन के लिए तंत्र शास्त्र में गणेश जी के विभिन्न रूपों की चर्चा की गई है। हमारे यहाँ एक उप-पुराण है जिसका नाम है मुद्गल पुराण। इस पुराण में गणेश जी के बत्तीस तांत्रिक रूपों की चर्चा की गई है जो इन्हीं सूक्ष्म अभिव्यक्तियों को संतुलित करते हुए मनुष्य की चेतना को उत्थान की ओर ले जाते हैं। इन बत्तीस रूपों में लक्ष्मी-गणपति रूप एक है, इसी तरह शक्ति-गणपति, बाल-गणपति, प्रणव-गणपति और उच्छिष्ट-गणपति जैसे रूप भी आते हैं। इस प्रकार गणेश जी के बत्तीस अलग-अलग स्वरूप बतलाए गए हैं जिनका संबंध रहता है मूल प्रवृत्तियों के साथ।

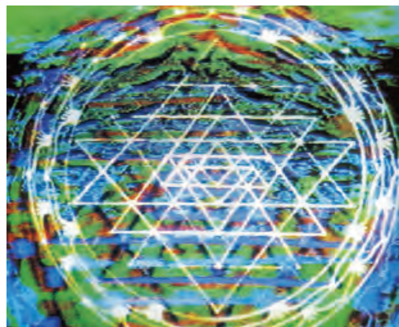
उदाहरण के रूप में, आहार पर नियंत्रण लाने के लिए बाल-गणपति की उपासना होती है। निद्रा को वश में करने के लिए महा-गणपति की उपासना होती है। काम-वासना को वश में करने के लिए उच्छिष्ट-गणपति की उपासना होती है। भय को कम करने के लिए विकट-गणपति की उपासना होती है। इसी तरह आध्यात्मिक उपलब्धि के लिए प्रणव-गणपति का स्वरूप है। बहुत बार आप देखते होंगे गणेश जी का चित्र ॐ अक्षर से बना हुआ रहता है, वह प्रणव-गणपति का प्रतीक है। इस प्रकार ये जो बत्तीस रूप हैं, वे चेतना की एक नकारात्मक ऊर्जा को दूर करने के लिए प्रयोग में लाए जाते हैं।

## यंत्र एवं मंत्र

तंत्र में आराधना के स्थान पर अब आता है यंत्र और मंत्र। हर देवी-देवता का एक यंत्र होता है जो उस देवी-देवता के ऊर्जा प्रवाह को दर्शाता है। गणेश जी का भी एक यंत्र होता है। यंत्र अपने आप में एक बहुत बड़ा विज्ञान है, शास्त्र है।



जब गणपति या अन्य किसी यंत्र को हम सामने रखकर उस पर अपने मन को एकाग्र करते हैं, त्राटक करते हैं, और उस यंत्र को अपने मन में देखते हैं, तो यंत्र की जो लकीरें होती हैं, वे हमारे शरीर की सूक्ष्म ऊर्जाओं को व्यवस्थित करतीं हैं, जिनका संचार प्राण नाड़ियों में होता है।



विदेशों में एक यंत्र है जिसका नाम टोनोस्कोप है। वह एक ऐसा यंत्र है जिसके सामने अगर आप किसी शब्द का उच्चारण करो तो शब्द का प्रतीक सामने आता है। जब ॐ मंत्र का उच्चारण किया गया इस यंत्र के सामने, तो आपको मालूम कौन-सा रूप उभरा? श्री यंत्र का रूप। मतलब जब हम ॐ मंत्र का उच्चारण करते हैं, तो उसी प्रकार की प्राणिक तरंगें हमारे मस्तिष्क के भीतर उत्पन्न होती हैं, जैसा कि कम्प्यूटर ने देखा और प्रस्तुत किया।

हर देवता का एक यंत्र और एक मंत्र होता है। गणेश जी का बीज मंत्र है *गं*। यह हुआ वैदिक मंत्र, और तंत्र शास्त्र में गणेश जी का बीज मंत्र कहा गया है *ग्लौं*। *गं* और *ग्लौं*, ये दोनों बीज मंत्र हैं, वैदिक और तांत्रिक। बीज मंत्र का संपुट लगाकर गणेश जी के विभिन्न नामों, जैसे *उच्छिष्ट-गणपतये नमः*, *बाल-गणपतये नमः*, *लक्ष्मी-गणपतये नमः*, आदि के अनुष्ठान से मन की एक वृत्ति परिवर्तित होती है।

हमने सिंगापुर के एक संग्रहालय में एक बार इस टोनोस्कोप यंत्र को देखा था, जो शब्द का रूप स्क्रीन पर प्रकट करता है। उसके सामने खड़े होकर हमने मंत्र-पाठ शुरू किया। दो-तीन मंत्र ही बोल पाए, क्योंकि लम्बी लाईन रहती है, हर कोई उसके सामने जाकर चिल्लाना चाहता है, कोई हेलो कहना चाहता है तो कोई गुड-बाए। खिलौने के रूप में लोग उसका प्रयोग करते हैं। लेकिन हमने तो दो-तीन मंत्रों का उच्चारण किया, जिनमें ॐ मंत्र भी था, क्योंकि पढ़ा था कि ॐ का जप करने से श्री यंत्र का रूप दिखलाई देता है। हमने वास्तव में श्री यंत्र के रूप को देखा, और जब *गं* मंत्र का जप कर रहे थे तो स्क्रीन पर गणपति यंत्र का निर्माण हुआ।

हमलोग तो केवल धार्मिक विचारधारा से प्रेरित होकर बोल देते हैं कि *ॐ नमः शिवाय* शिव जी का मंत्र है या *ॐ नमो नारायणाय* भगवान विष्णु का मंत्र है, लेकिन यहाँ पर साक्षात् वैज्ञानिक दृष्टि से आप देख सकते हो कि जो मंत्र सक्रीन पर शब्द-ध्वनि के द्वारा एक यंत्र को प्रकट कर सकता है, वही मंत्र हमारे मन-मस्तिष्क में भी प्राणों के संचार को व्यवस्थित कर सकता है।

जब प्राणों का संचार व्यवस्थित होता है, तब जाकर मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के क्रियाकलाप संतुलित एवं व्यवस्थित होते हैं।

भय से मुक्ति के लिए शक्ति-गणपति की आराधना होती है। काम-वासना से मुक्ति के लिए उच्छिष्ट-गणपति की आराधना होती है। गणेश जी के बारे में भी हमारे देश में अलग-अलग मान्यताएँ हैं। दक्षिण भारत में बहुत-सी ऐसी मान्यताएँ हैं जिनमें गणेश जी को ब्रह्मचारी के रूप में देखा गया है। कुछ ऐसी भी मान्यताएँ हैं भारत में जहाँ गणेश जी को अपनी शक्ति के साथ में देखा गया है, गोद में बैठाए। जगन्नाथ पुरी मंदिर परिसर के भीतर गणेश मंदिर में एक विग्रह है जो कपड़े से ढँका हुआ है। पण्डित लोग बतलाते नहीं हैं उस विग्रह को, दूर से ही दर्शन करा देते हैं। जब हम वहाँ गए थे तो हमने कहा कि हमको दर्शन करना है। उन्होंने वस्त्र उठा दिया, और उसमें गणेश जी और उनकी शक्ति सम्भोग की अवस्था में हैं। यह तांत्रिक प्रतीक है, और इसी को कहते हैं उच्छिष्ट गणपति, जो सम्भोग की अवस्था में हैं। शक्ति-गणपति के स्वरूप में शक्ति उनकी गोद में बैठी हैं।

इन दोनों स्वरूपों का प्रयोग मन की घोर अवस्था को शान्त करने के लिए होता है। आखिर भय और काम-वासना, दोनों मन की घोर अवस्थाएँ हैं। जब इस साधना के माध्यम से हम इन मानसिक अवस्थाओं को शान्त कर पाते हैं, तब फिर हम बन जाते हैं अघोर। अघोर का मतलब होता है शान्त, और घोर का मतलब होता है उद्दण्ड, उत्तेजित। जब गणेश उपासना से हम अपने जीवन की इन घोर वृत्तियों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं तब अघोर अवस्था को प्राप्त करते हैं।



अघोर अवस्था को प्राप्त करने के बाद फिर प्रणव-गणपति की साधना आरम्भ होती है और यहाँ पर आध्यात्मिक उपलब्धि होने लगती है। इसमें ॐ के द्वारा गणपति की उपासना और गणपति का आवाहन किया जाता है। ॐ शब्द जो 'अ', 'उ' एवं 'म' अक्षरों से बना है, शिव जी का प्रतीक भी है, और तंत्र में गणेश जी भी ॐ के देवता माने गये

हैं। 'अ', 'उ' एवं 'म' अक्षरों से उनका उपचार होता है, जो कर्म-काण्ड के रूप में भी होता है और एक उपासना के रूप में भी। जब उपासना के रूप में हम प्रणव-गणपति की आराधना करते हैं, तब फिर साक्षात्कार भी सम्भव होता है।

## साधना में भावना का महत्त्व

प्रणव-गणपति के साथ भाव का सम्बन्ध होना है। तुम चाहे कितना ही हाथ-पैर मारो, कितनी ही साधना करो, कितना ही मंत्र-जप करो, पर अन्त में एक चीज ही हमें दिशा-निर्देशित करती है, और वह है हमारी भावना। उस भावना में विश्वास और समर्पण होना चाहिए, जैसे गुरु के साथ हमारा एक सम्बन्ध रहता है, विश्वास, श्रद्धा और समर्पण का। वैसे बहुत ही कम लोग इसको प्राप्त कर पाते हैं। अधिकांश चेले तो गुरु पर अविश्वास करते हैं, सोचते हैं कि पता नहीं, गुरु जी हमको धोखा न दे दें। अगर गुरु जी कोई बात कहें, तो चेला अविश्वास करता है, 'यह कैसे सम्भव होगा?' चेले को गुरु में विश्वास नहीं होता! अगर मैं अपने चेलों से भी पूछूँ, और वे सच बात कहें तो सौ में शायद नब्बे मुझ पर विश्वास नहीं करते हैं, क्योंकि श्रद्धा, विश्वास और समर्पण से व्यक्ति घबराता है। सोचता है, 'अगर मैं अपने-आपको समर्पित कर दूँगा तो मेरा क्या अस्तित्व रहेगा? फिर तो गुरु जी की हर बात माननी पड़ेगी, फिर मेरी तो कुछ चलने वाली है नहीं।' बहुतों के साथ ऐसा होता है। लेकिन अन्तिम बात यही है कि भावना के बल पर अगर आप अपना सम्बन्ध अपने आराध्य, अपने ईश्वर के साथ जोड़ेंगे तो आपका वह आराध्य, आपका वह ईश्वर जीवित हो जाएगा, आपके सामने आ जाएगा।

इस सम्बन्ध में एक कहानी कहकर अपनी बात समाप्त करता हूँ। एक गाँव में एक छोटा-सा लड़का अपनी विधवा माँ के साथ रहता था। गाँव जंगलों से घिरा हुआ था और जंगल के पार विद्यालय था। जब लड़का बड़ा हुआ, पढ़ने लायक हुआ, तो माँ ने एक दिन ले जाकर विद्यालय में उसका नामांकन कर दिया। दूसरे दिन से वह बालक अकेले ही बीहड़ जंगल से गुजरकर चार-पाँच किलोमीटर दूर विद्यालय जाने लगा। सबेरे निकलता था सूर्य निकलने के पूर्व, जंगल में अन्धकार। विद्यालय की समाप्ति पर वापस आता था, उस समय संध्या होने लगती थी, जंगल में अन्धकार। बेचारे को बहुत डर लगता था।

एक दिन उसने माँ से कहा कि मुझे तो जंगल से गुजरते हुए बहुत डर लगता है। माँ कहती है, 'बेटा, तुम अपने बड़े भाई को क्यों नहीं बुलाते हो? वह तुम्हारे साथ जाएगा, तुमको ले भी आएगा।' बालक कहता है, 'मैया, बताओ मेरे बड़े भाई का नाम क्या है?' माँ कहती है, 'तुम्हारे बड़े भाई का नाम गोपाल है। जब तुम जंगल में प्रवेश करते हो तो अपने बड़े भाई को बुलाओ। वह तुम्हारा हाथ पकड़कर तुमको जंगल पार ले जाएगा। आना और जाना दोनों सम्भव हो जाएगा।'

लड़का सरल हृदय वाला था, निष्कपट था। अगले दिन जंगल पहुँचकर उसने पुकारा, 'भैया गोपाल! कहाँ हो, आओ, मुझे डर लग रहा है।' एक मिनट बीता, पाँच मिनट बीते, दस मिनट बीते, गोपाल नहीं आया। रो पड़ा वह, 'भैया कहाँ हो तुम? मुझे विद्यालय जाना है।' अचानक उसको बाँसुरी की ध्वनि सुनाई दी, और एक पेड़ की ओट से एक सुन्दर-सा बालक निकलता है जिसके सिर पर मयूर पंख है। वह कहता है, 'मैं ही तुम्हारा भाई गोपाल हूँ, चलो चलते हैं साथ।' और रोज उस बालक को इधर से उधर ले जाने लगा।

एक दिन विद्यालय में कहा गया कि अगले दिन उत्सव है, सब कोई अपने घर से दूध लाना। बालक आता है मैया के पास। कहता है, 'आज मास्टर जी बोले हैं कि सब कोई एक लोटा दूध लेकर आना।' मैया कहती है, 'बेटा, अपने घर में तो खाने का एक कण भी नहीं है, तुम गोपाल से क्यों नहीं कहते, वह तुमको थोड़ा दूध दे सकता है।' लड़का गया जंगल में और जब गोपाल आते हैं तो उनसे कहता है, 'भैया! आज मास्टर जी एक लोटा दूध माँग रहे हैं। घर में कुछ है नहीं, मैं क्या करूँ?'

गोपाल एक छोटी-सी लुटिया में चुल्लूभर दूध देकर कहते हैं, 'तुम यह अपने मास्टर जी को दे देना।' वह बालक लुटिया में एक चुल्लू दूध लेकर जाता है मास्टर जी के पास। मास्टर जी देखते हैं, सामने की मेज पर तो दूध से भरे बड़े-बड़े लोटे रखे हुए हैं और यह गँवार बालक एक छोटी-सी लुटिया में एक चुल्लूभर दूध लेकर आया है। वे झल्लाकर उससे दूध लेते हैं, कहते हैं, 'यह क्या लाया है?' और उसे फेंक देते हैं।

जब लुटिया जमीन पर गिरी, बह चली दूध की धार। ऐसी धार कि नदी बन गयी। मास्टर जी की आँखें फटी-की-फटी रह गयीं। उन्होंने पूछा, 'यह कहाँ से लाये तुम?' लड़का कहता है कि मेरे भैया गोपाल ने मुझे दिया है।



मास्टर जी कहते हैं कि मुझे भी अपने भाई से मिलाओ, मैं मिलना चाहता हूँ। लड़का कहता है, चलो मेरे साथ। गया जंगल में और पुकारने लगा, 'भैया गोपाल, भैया गोपाल, मास्टर जी मिलना चाहते हैं।' पर गोपाल तो आए नहीं।

उसने फिर पुकारा, 'भैया गोपाल, कहाँ हो तुम? मास्टर जी मिलना चाहते हैं। तुम नहीं आए तो वे मेरे ऊपर विश्वास नहीं करेंगे।' जब उसने यह कहा तब गोपाल को लगा कि कुछ करना होगा, तो आ गए सामने। लड़का कहता है, 'मास्टर साहब देखिये! मेरे भैया आ रहे हैं।' मास्टर साहब देखते हैं, वहाँ तो खाली पगडण्डी है, और कुछ नहीं है। कहते हैं, 'क्या कहते हो कि तुम्हारे भैया आ रहे हैं! मुझे तो कोई नहीं दिख रहा है।'

लड़का कहता है, 'देखिये न! कितना सुन्दर रूप है उनका, सिर पर पगड़ी है, पगड़ी में मयूर पंख है, हाथ में बाँसुरी है, एक हाथ में लोटा है दूध का, मुस्कुराते हुए चले आ रहे हैं नंगे पाँव, उनके पैर में जो घुँघरु हैं, छन-छन आवाज कर रहे हैं।'

मास्टर जी कहते हैं, 'भई! मैं तो नहीं देख सकता।' लड़का प्रार्थना करता है, 'भैया, अगर तुम मास्टर जी को नहीं दिखाई दोगे, तो फिर वे मेरे ऊपर कभी विश्वास नहीं करेंगे।' तब गोपाल कहते हैं, 'देखो भैया, वे बहुत बड़े हो गए हैं। मैं सिर्फ छोटों से ही मिलता हूँ। लेकिन अगर तुम चाहते हो कि उनको आभास हो जाए कि मैं यहाँ हूँ तो ठीक है।' बाँसुरी उठाई और छेड़ दी

एक तान। मास्टर जी ने उस बाँसुरी की तान को सुन लिया, और वे बालक के चरणों में गिर गए। यह हुआ भाव का सम्बन्ध।

अन्त में हम यही कहेंगे कि तुम चाहे कितनी ही साधना क्यों न कर लो, कितना ही आसन-प्राणायाम क्यों न कर लो, लेकिन अगर तुमको चाहिए मुक्ति, अपने जीवन के जंजाल से, तनाव से, क्लेश से, और दुःख से, तो गणेश जी से एक सरल भाव का सम्बन्ध बनाओ। तब जाकर गणेश जी बनेंगे तुम्हारे मित्र और तुम कह सकते हो, '*त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव*, Ganesha is my friend!'

*हरिः ॐ तत्सत्*



# उपसंहार

## अष्टविनायक तीर्थयात्रा

*4 अप्रैल 2018*

इस वर्ष गंगा दर्शन में मकर-संक्रांति से एक साल के लिये प्रतिदिन हवन एवं मंत्रों द्वारा गणेश आराधना सम्पन्न की जाती है। आपको मालूम होगा, पाँच साल तक हमने पंचाग्नि साधना की। मन में इच्छा थी कि गणेश जी का दर्शन करें, क्योंकि उन्होंने ही पंचाग्नि साधना निर्विघ्न सम्पन्न करने में सहायता की है और आगे भी उनकी सहायता, उनके आशीर्वाद की याचना तो होगी ही।

पंचाग्नि के बाद यह प्रथम तीर्थयात्रा है जिसमें हम जा सके। 27 मार्च को गंगा दर्शन से निकले, 28 को पूना पहुँचे और 29 से दर्शन आरम्भ हुआ।



29, 30, 31 और 1 तारीख को दर्शन किया, 2 तारीख को आना था, लेकिन उस दिन भारत बंध था, तो 3 तारीख को वापस पहुँचे। यह साल गुरु जी की समाधि का आठवाँ साल है, और इस वर्ष गंगा दर्शन में गणेश आराधना का कार्यक्रम आरम्भ किया है, और इसी साल अष्टविनायक के दर्शन भी हो गये!

हमें नहीं लगता कि ईश्वर के बारे में ज्यादा कुछ कहना आवश्यक है, क्योंकि ईश्वर तो हर व्यक्ति की अनुभूति का विषय होता है। हमें तो आश्चर्य होता है जब लोग भगवान के बारे में लम्बे-चौड़े प्रवचन देते हैं और ईश्वरीय तत्त्व को बौद्धिक बना देते हैं। लेकिन ईश्वर तो मात्र एक अनुभूति है, उससे अधिक कुछ नहीं। आप शक्कर खाते हो तो उसका जो स्वाद आप अनुभव करते हो, क्या किसी शब्दकोष में या किसी कथा में या किसी प्रवचन में बौद्धिक स्तर पर जान पाओगे? कानों से सुनी बात और जिह्वा से अनुभव किया स्वाद – ये दो अलग चीजें हैं। कान से जो तुम सुनते हो वह अनुभव का प्रमाण नहीं है। इसलिये श्री स्वामीजी भी जब तक मुंगेर में थे, उन्होंने ईश्वर के बारे में एक शब्द नहीं कहा। वे कहते थे कि मैं एक संन्यासी हूँ, अभी मुझे एक लक्ष्य मिला है अपने गुरु से, और वह है योग को स्थापित करना। इस संदर्भ में वे इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, कुण्डलिनी, चक्र, आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बंध, मंत्रयोग, नादयोग, लययोग, हठयोग, राजयोग, क्रियायोग, कुण्डलिनी–योग के सभी विषयों पर बोले, लेकिन ईश्वर के बारे में कभी चर्चा नहीं की। यहाँ तक कि बहुत-से लोग कहते थे कि श्री स्वामीजी नास्तिक हैं, भगवान को मानते नहीं हैं। फिर जब हमारे गुरु जी ने मुंगेर छोड़ा और रिखिया गये तब वहाँ जाकर उन्होंने भक्ति और भगवान पर कहना आरम्भ किया।

उनका यही मानना था कि तर्क-वितर्क से ईश्वर की अनुभूति प्राप्त नहीं होती, बल्कि व्यक्तिगत अनुभव से होती है। तुम कहते हो कि आज बहुत गर्मी है, पसीना निकल रहा है। लेकिन यह तो शब्दों का खेल हुआ। त्वचा जो अनुभव कर रही है, उसे क्या तुम कभी पूरी तरह व्यक्त कर पाओगे? उसको व्यक्त करने के लिये बुद्धि द्वारा प्रयास कर सकते हो, कह सकते हो कि शरीर झुलस रहा है, एक बात, पसीना निकल रहा है, दूसरी बात, गर्मी असह्य हो रही है, तीसरा बिंदु, सिर चक्कर खा रहा है, चौथा बिंदु – मतलब जो भी तुम बोलोगे उस अनुभव को समझाने के लिये वह एक समग्र अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि तुम उस समग्रता को बुद्धि के द्वारा छोटे-छोटे वाक्यों में बाँट रहे हो, जिसके कारण ग्रहणशीलता पूर्ण नहीं होती, अधूरी रहती है।

बहुत-से लोग सोच सकते हैं, स्वामीजी तीर्थ क्यों गये। देखिये, जब तक हम योग से जुड़े थे, कभी तीर्थ वगैरह कुछ नहीं किया, लेकिन जब हम योग पीठ से निवृत्त हुये और संन्यास पीठ से जुड़े, तब से संन्यास के दर्शन, संन्यास की शिक्षा, संन्यास के आचरण, इस मार्ग पर चलने का प्रयास कर रहे हैं। इस क्रम में साधना भी होती है, जैसे पंचाग्नि साधना। इसके अलावा और भी विभिन्न साधनाएँ हैं जो भविष्य में हमें करनी होंगी यहाँ पर, पंचाग्नि तो शुरुआत है। ये साधनाएँ सबके लिये नहीं हैं, आप लोगों के लिये योग पर्याप्त है। आखिर साधनाओं का भी अलग-अलग प्रयोजन होता है।



## सूक्ष्म अनुभूति

ब्रह्माण्ड में निश्चित रूप से एक ईश्वरीय तत्त्व व्याप्त है। तुम अपने शरीर को देख सकते हो, उसको छू सकते हो, उसका अनुभव तुम्हें होता है और तुम कहते हो कि मेरा शरीर है। मन को देख या छू तो नहीं सकते, लेकिन अपने विचारों और भावनाओं के द्वारा यह ज्ञान होता है कि इस शरीर के भीतर कुछ और भी है, जो पदार्थ नहीं है, जो ऊर्जा का रूप है और जो हमारे जीवन को निर्देशित करता है, संचालित करता है और उस सूक्ष्म तत्त्व को हम मन के नाम से सम्बोधित करते हैं। मन का आभास तब होगा जब विचार उत्पन्न होंगे, इसी तरह हृदय का आभास तब होगा जब भावानाओं के आवेग को तुम झेलोगे। क्रोध को तुम समझते हो, क्योंकि क्रोध एक आवेग के रूप में झेलते हो, भय को समझते हो, क्योंकि भय एक आवेग के रूप में आता है। इसी तरह दया, प्रेम, ईर्ष्या, करुणा, घृणा आदि सब आवेग के रूप में जब आते हैं तब भावों का अनुभव होता है, उसके पूर्व नहीं।

भावना आत्मा की स्थूल अभिव्यक्ति है। उसके परे आत्मा की जो सूक्ष्म अभिव्यक्ति होती है, वह है सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् की अनुभूति। भावनाओं की जो स्थूल अभिव्यक्ति है उसी को उच्च अभिव्यक्ति में परिवर्तित किया जाता है भक्ति के द्वारा। लेकिन भक्ति केवल नाम-जप, भजन-कीर्तन, कर्म-काण्ड, पूजा-पाठ आदि नहीं है। चौबीस घंटे घंटी बजा लो, फूल माला अर्पित कर दो, मंत्र पाठ कर लो– कुछ नहीं होगा जब तक तुम अन्तरात्मा से एक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर लेते। अन्तरात्मा से सम्बन्ध स्थापित करके ही उस परमसत्ता का अनुभव प्राप्त हो सकता है। ऐसा हमारे गुरु जी ने कहा, ऐसा हमारे परमगुरु स्वामी शिवानन्द जी कहते थे। पहले बात समझ में नहीं आती थी, लेकिन अब समझ में आती है। जैसे-जैसे संन्यास मार्ग में प्रवृत्ति बढ़ रही है, बात समझ में आ रही है, और उसी का एक अनुभव इस यात्रा में प्राप्त हुआ है। किस रूप में? कृपा के रूप में, अनुग्रह के रूप में, आशीर्वाद के रूप में।

## गणेश जी और मानव जीवन

गणेश जी का हर व्यक्ति के जीवन से बहुत गहरा सम्बन्ध है। शिव जी कौन हैं? ब्रह्माण्डीय चेतना। पार्वती जी कौन हैं? ब्रह्माण्डीय शक्ति। कार्तिकेय जी कौन हैं? इसी ब्रह्माण्डीय चेतना और ब्रह्माण्डीय शक्ति के स्थूल रूप, जो

हमेशा दानवों से लड़ाई करते रहते हैं, दक्षिण भाग में। शरीर में दक्षिण भाग का मतलब होता है पैर। पैरों को तो कष्ट सहना पड़ता है न! पैरों को संघर्ष करना पड़ता है, कठोर भूमि पर चलना पड़ता है, पत्थरों पर चलना पड़ता है, और वे हर प्रकार की यातना को सहकर भी आपके शरीर को सुरक्षित रखते हैं। उसी प्रकार से कार्तिकेय जी भी पैर का काम करते हैं, शिव-शक्ति को संसार की तामसिकता से बचाते हुये, मनुष्य जीवन को उस परम सत्ता के साथ जोड़ने के लिये प्रेरित करते हैं।

दूसरे पुत्र हैं हमारे गणेश जी, जिनके बारे में कहा गया है कि वे बुद्धि के प्रतीक हैं। अगर आप मस्तिष्क के चित्र को देखोगे तो जहाँ पर स्पाइनल कॉर्ड ब्रेन स्टेम में प्रवेश करती है वह क्षेत्र गणेश जी का है। उसी को योगीजन शरीर में गणेश जी का आवास मानते हैं। यहाँ पर खूबी यह कि मस्तिष्क का जो निचला हिस्सा है उसको कहते हैं प्रिमिटिव ब्रेन, और मस्तिष्क के ऊपर का जो हिस्सा होता है उसको कहते हैं इन्टेलेक्चुअल या हाइयर ब्रेन। प्रिमिटिव ब्रेन बुद्धिहीन है, वह इंस्टिंक्ट पर, प्रवृत्ति अनुसार चलता है। यह प्रवृत्ति मूलत: अपनी सुरक्षा से सम्बन्धित रहती है। जो हाइयर बे्रन है वह ज्ञान और विवेक पर आश्रित है, वहाँ पर समस्याओं का समाधान होता है। एक तरह से कहें तो प्रिमिटिव ब्रेन है विघ्नकर्ता, क्योंकि परेशानी उसी से होती है, और जो इन्टेलेक्चुअल ब्रेन है, वह है विघ्नहर्ता, क्योंकि परेशानी उससे दूर होती है। गणेश जी के ये दो नाम हैं, और हमारे जीवन के ये दो आयाम गणेश जी द्वारा संचालित होते हैं, प्रिमिटिव ब्रेन और हाइयर ब्रेन, पशु बुद्धि और मानव बुद्धि।



कुण्डलिनी योग के अनुसार गणेश जी का आवास मूलाधार चक्र में भी होता है। वे वहाँ के देवता हैं जहाँ पर कुण्डलिनी सोई है। अगर कोई व्यक्ति अपने आध्यात्मिक जीवन का उत्थान चाहता है तो निश्चित रूप से गणेश आराधना करनी होगी,

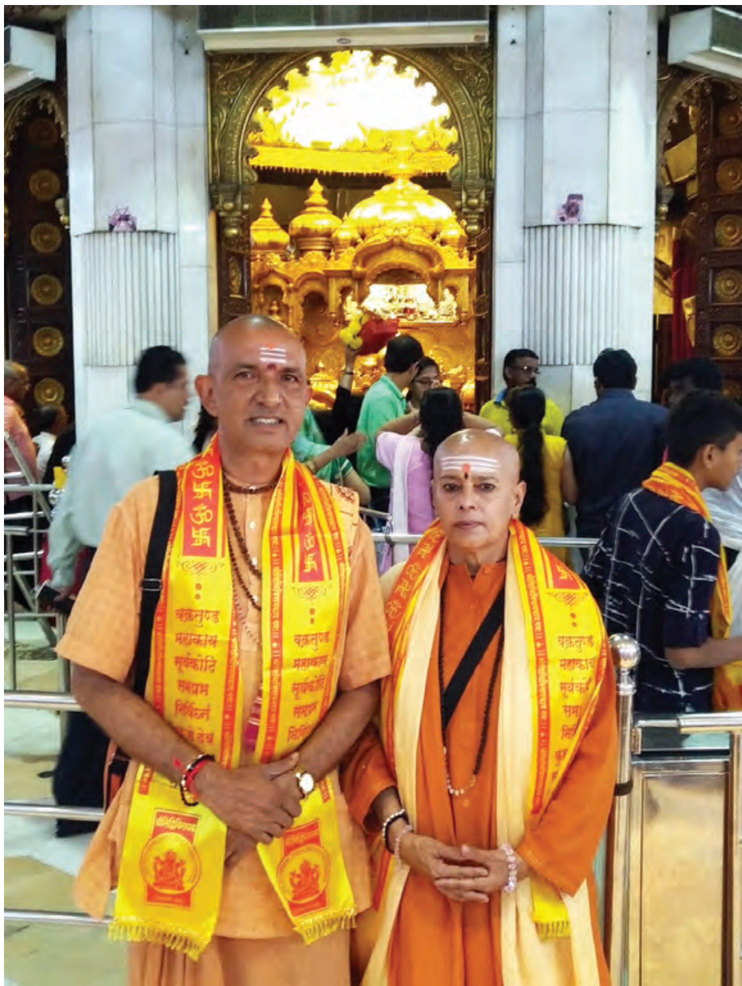
क्योंकि उनकी कृपा से ही मूलाधार का दरवाजा खुलेगा, कुण्डलिनी जगेगी और ऊपर की ओर चढ़ेगी। उनकी कृपा से ही हमारा प्रिमिटिव ब्रेन परिवर्तित होगा एक प्रकाशमय मस्तिष्क के रूप में। इस तरह मानव लोक और देव लोक के बीच के द्वारपाल के रूप में भी गणेश जी का काम होता है। जो भोगी, संसारी, कपटी, लंपटी मनुष्य है उसके लिये विघ्नकर्ता हैं और जो विवेकी, मर्यादित, सद्भावनापूर्ण साधु है उसके लिये विघ्नहर्ता।

गणेश आराधना की परम्परा हमारे देश में बहुत प्रचलित है, लेकिन इसका विशेष प्रचलन है पश्चिम के राज्यों में। भगवान शिव ने बहुत सुन्दर ढंग से अपने परिवार का क्षेत्र-विभाजन किया है। स्वयं उत्तर का कमान संभाला हुआ है। पार्वती जी से उन्होंने कहा है कि तुम पूर्व का कमान संभालो। तो बंगाल से लेकर पूर्वोत्तर राज्यों तक उन्हीं का क्षेत्र है। गणेश जी से कहा कि तुम पश्चिम का क्षेत्र संभालो, तो पश्चिम में गणेश जी छाये हुये हैं और कार्तिकेय जी से कहा कि दक्षिण का क्षेत्र संभालो तो कार्तिकेय जी का दक्षिण में बोलबाला है।

हम और स्वामी सत्संगी गणेश जी के क्षेत्र में गये थे, अष्टविनायक दर्शन करने। दोनों की पहले से योजना थी कि प्रथम तीर्थयात्रा गणेश जी के क्षेत्र में होगी। अभी अवसर मिला तो प्रस्थान किया। लेकिन गणेश जी की कारामात देखो! जब हमलोग वहाँ पहुँचे तो हमसे कहा गया कि सब व्यवस्था हो गई है। पूछा, 'कितने बजे जाना है?' 'सबेरे।' 'ठीक, कैसे जाना है?' 'हेलीकॉप्टर से जाना है।' हमने कहा, 'यह कहाँ से हो गया भाई? हमलोग तो पैदल जाने वाले थे!'आखिर जब किसी चीज के लिये याचना की जाती है तो आदमी को याचक के रूप में जाना चाहिये, और वैसी ही योजना थी। लेकिन वहाँ पर गणेश जी ने हमारी पूरी योजना ही चौपट कर दी। दो स्थानों में स्थानीय लोगों ने हेलीपैड बनाकर, सरकार से अनुमति लेकर हेलीकॉप्टर द्वारा हमलोगों को वहाँ लाने का निर्णय लिया। यह उनके लिये बहुत बड़ी चीज थी कि उनके गाँव में हेलीपैड बनेगा, हेलीकॉप्टर उतरेगा जिसमें मंत्री वगैरह आयेंगे दर्शन करने के लिये। लेकिन जब हमलोग उतरे तो उन्होंने सोचा होगा कि ये तो देहाती छाप साधु हैं!

गणेश जी की कृपा से उत्साह इतना था कि सभी दर्शन निर्विघ्न और बहुत अच्छे-से हो गये। पहले दिन गणेश जी के चार स्थान, जो दूर-दूर पर थे, उनका दर्शन हेलीकॉप्टर से हो गया। हेलीकॉप्टर का पायलट भी संयोग

से भागलपुर का था, उसने बताया कि बीस साल से वह मुंगेर नहीं गया है, लेकिन विश्व योग सम्मेलन में आया था! दूसरे दिन दो स्थानों का और तीसरे दिन भी दो स्थानों का दर्शन गाड़ी से और पैदल चलकर हो गया। इस प्रकार तीन दिन में आठ दर्शन हो गये। फिर चौथे दिन आये मुम्बई। वहाँ पर सिद्धिविनायक जी का दर्शन किया और महालक्ष्मी मंदिर का भी दर्शन किया। इस प्रकार बड़े आनंद के साथ यह तीर्थयात्रा सम्पन्न करके 3 तारीख को हम गंगा दर्शन लौट आए।



# परिशिष्ट

## चयनित गणेश स्तोत्र

### श्रीविष्णुकृतं गणेशस्तोत्रम्

ईश त्वां स्तोतुमिच्छामि ब्रह्मज्योति: सनातनम्।
निरूपितुमशक्तोऽहमनुरूपमनीहकम्॥1॥
प्रवरं सर्वदेवानां सिद्धानां योगिनां गुरुम्।
सर्वस्वरूपं सर्वेशं ज्ञानराशिस्वरूपिणम्॥2॥
अव्यक्तमक्षरं नित्यं सत्यमात्मस्वरूपिणम्।
वायुतुल्यातिनिर्लिप्तं चाक्षतं सर्वसाक्षिणम्॥3॥
संसारार्णवपारे च मायापोते सुदुर्लभे।
कर्णधारस्वरूपं च भक्तानुग्रहकारकम्॥4॥
वरं वरेण्यं वरदं वरदानामपीश्वरम्।
सिद्धं सिद्धिस्वरूपं च सिद्धिदं सिद्धिसाधनम्॥5॥
ध्यानातिरिक्तं ध्येयं च ध्यानासाध्यं च धार्मिकम्।
धर्मस्वरूपं धर्मज्ञं धर्माधर्मफलप्रदम्॥6॥
बीजं संसारवृक्षाणामंकुरं च तदाश्रयम्।
स्त्रीपुन्नपुंसकानां च रूपमेतदतीन्द्रियम्॥7॥
सर्वाद्यमग्रपूज्यं च सर्वपूज्यं गुणार्णवम्।
स्वेच्छया सगुणं ब्रह्म निर्गुणं चापि स्वेच्छया॥8॥
स्वयं प्रकृतिरूपं च प्राकृतं प्रकृते: परम्।
त्वां स्तोतुमक्षमोऽनन्त: सहस्रवदनेन च॥9॥
न क्षम: पञ्चवक्त्रश्च न क्षमश्चतुरानन:।
सरस्वती न शक्ता च न शक्तोऽहं तव स्तुतौ।
न शक्ताश्च चतुर्वेद: के वा ते वेदवादिन:॥10॥

## श्रीशक्तिशिवकृत-गणाधीशस्तोत्रम्

नमस्ते गणनाथाय गणानां पतये नम:।
भक्तिप्रियाय देवेश भक्तेभ्य: सुखदायक॥1॥
स्वानन्दवासिने तुभ्यं सिद्धिबुद्धिवराय च।
नाभिशेषाय देवाय ढुण्ढिराजाय ते नम:॥2॥
वरदाभयहस्ताय नम: परशुधारिणे।
नमस्ते सृणिहस्ताय नाभिशेषाय ते नम:॥3॥
अनामयाय सर्वाय सर्वपूज्याय ते नम:।
सगुणाय नमस्तुभ्यं ब्रह्मणे निर्गुणाय च॥4॥
ब्रह्मभ्यो ब्रह्मदात्रे च गजानन नमोऽस्तु ते।
आदिपूज्याय ज्येष्ठाय ज्येष्ठराजाय ते नम:॥5॥
मात्रे पित्रे च सर्वेषां हेरम्बाय नमो नम:।
अनादये च विघ्नेश विघ्नकर्त्रे नमो नम:॥6॥
विघ्नहर्त्रे स्वभक्तानां लम्बोदर नमोऽस्तु ते।
त्वदीयभक्तियोगेन योगीशा: शान्तिमागता:॥7॥
किं स्तुवो योगरूपं तं प्रणमावश्च विघ्नपम्।
तेन तुष्टो भव स्वामिन्नित्युक्त्वा तं प्रणेमतु:॥8॥



## विष्णूपदिष्टं गणेशनामाष्टकं स्तोत्रम्

गणेशमेकदन्तं च हेरम्बं विघ्ननायकम्।
लम्बोदरं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं गुहाग्रजम्॥1॥
नामाष्टार्थं च पुत्रस्य शृणु मातर्हरप्रिये।
स्तोत्राणां सारभूतं च सर्वविघ्नहरं परम्॥2॥
ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचकः।
तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम्॥3॥
एकशब्दः प्रधानार्थो दन्तश्च बलवाचकः।
बलं प्रधानं सर्वस्मादेकदन्तं नमाम्यहम्॥4॥
दीनार्थवाचको हेश्च रम्बः पालकवाचकः।
दीनानां परिपालकं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्॥5॥
विपत्तिवाचको विघ्नो नायकः खण्डनार्थकः।
विपत्खण्डनकारकं नमामि विघ्ननायकम्॥6॥
विष्णुदत्तैश्च नैवेद्यैर्यस्य लम्बोदरं पुरा।
पित्रा दत्तैश्चविविधैर्वन्दे लम्बोदरं च तम्॥7॥
शूर्पाकारौ च यत्कर्णौ विघ्नवारणकारणौ।
सम्पदौ ज्ञानरूपौ च शूर्पकर्णं नमाम्यहम्॥8॥
विष्णुप्रसादपुष्पं च यन्मूर्ध्नि मुनिदत्तकम्।
तद्गजेन्द्रवक्त्रयुक्तं गजवक्त्रं नमाम्यहम्॥9॥
गुहस्याग्रे च जातोऽयमाविर्भूतो हरालये।
वन्दे गुहाग्रजं देवं सर्वदेवाग्रपूजितम्॥10॥

## देवकृत-गणेशाभिनन्दनम्

गजाननाय पूर्णाय सांख्यरूपमयाय ते।
विदेहेन च सर्वत्र संस्थिताय नमो नमः॥1॥
अमेयाय च हेरम्ब परशुधारकाय ते।
मूषकवाहनायैव विश्वेशाय नमो नमः॥2॥
अनन्तविभवायैव परेषां पररूपिणे।
शिवपुत्राय देवाय गुहाग्रजाय ते नमः॥3॥
पार्वतीनन्दनायैव देवानां पालकाय ते।
सर्वेषां पूज्यदेहाय गणेशाय नमो नमः॥4॥



स्वानन्दवासिने तुभ्यं शिवस्य कुलदैवत।
विष्णवादीनां विशेषेण कुलदेवाय ते नम:॥5॥
योगाकाराय सर्वेषां योगशान्तिप्रदाय च।
ब्रह्मेशाय नमस्तुभ्यं ब्रह्मभूतप्रदाय ते॥6॥
सिद्धिबुद्धिपते नाथ सिद्धिबुद्धिप्रदायिने।
मायिने मायिकेभ्यश्च मोहदाय नमो नम:॥7॥
लम्बोदराय वै तुभ्यं सर्वोदरगताय च।
अमायिने च मायाय आधाराय नमो नम:॥8॥
गज: सर्वस्य बीजं यत्तेन चिह्नेन विघ्नप।
योगिनस्त्वां प्रजानन्ति तदाकारा भवन्ति ते॥9॥
तेन त्वं गजवक्त्रश्च किं स्तुमस्त्वां गजानन।
वेदादयो विकुण्ठाश्च शंकराद्याश्च देवपा:॥10॥
शुक्रादयश्च शेषाद्या: स्तोतुं शक्ता भवन्ति न।
तथापि संस्तुतोऽसि त्वं स्फूर्त्या त्वद्दर्शनात्मना॥11॥

## गणेशाष्टकम्

यतोऽनन्तशक्तेरनन्ताश्च जीवा यतो निर्गुणादप्रमेया गुणास्ते।
यतो भाति सर्वं त्रिधा भेदभिन्नं सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥1॥

यतश्चाविरासीज्जगत्सर्वमेतत् तथाऽब्जासनो विश्वगो विश्वगोप्ता।
तथेन्द्रादयो देवसंघा मनुष्या: सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥2॥

यतो वह्नि-भानू भवो भूर्जलं च यत: सागराश्चन्द्रमा व्योम वायु:।
यत: स्थावरा जंगमा वृक्षसंघा: सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥3॥

यतो दानवा: किन्नरा यक्षसंघा यतश्चारणा वारणा: श्वापदाश्च।
यत: पक्ष-कीटा यतो वीरुधश्च सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥4॥

यतो बुद्धिरज्ञाननाशो मुमुक्षोर्यत: सम्पदो भक्तिसन्तोषिका: स्यु:।
यतो विघ्ननाशो यत: कार्यसिद्धि: सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥5॥

यत: पुत्रसम्पद्यतो वाञ्छितार्थो यतोऽभक्तविघ्नास्तथाऽनेकरूपा:।
यत: शोक-मोहौ यत: काम एव सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥6॥

यतोऽनन्तशक्ति: स शेषो बभूव धराधारणेऽनेकरूपे च शक्त:।
यतोऽनेकधा स्वर्गलोका हि नाना सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥7॥

यतो वेदवाचोऽतिकुण्ठा मनोभि: सदा नेति नेतीति यत्ता गृणन्ति।
परब्रह्मरूपं चिदानन्दभूतं सदा तं गणेशं नमामो भजाम:॥8॥



## एकदन्त-गणेशस्तोत्रम्

सदात्मरूपं सकलादि भूतममयिनं सोऽहमचिन्त्यबोधम्।
अनादि-मध्यान्त-विहीनमेकं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥1॥

अनन्त-चिद्रूप-मयं गणेशं ह्यभेद-भेदादि-विहीनमाद्यम्।
हृदि प्रकाशस्य धरं स्वधीस्थं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥2॥

विश्वादिभूतं हृदि योगिनां वै प्रत्यक्षरूपेण विभान्तमेकम्।
सदा निरालम्ब-समाधिगम्यं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥3॥

स्वबिम्बभावेन विलासयुक्तं बिन्दुस्वरूपा रचिता स्वमाया।
तस्यां स्ववीर्यं प्रददाति यो वै तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥4॥

त्वदीय-वीर्येण समर्थभूता माया तया संरचितं च विश्वम्।
नादात्मकं ह्यात्मतया प्रतीतं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥5॥

त्वदीय-सत्ताधरमेकदन्तं गणेशमेकं त्रयबोधितारम्।
सेवन्त आपुस्तमजं त्रिसंस्थास्तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥6॥

ततस्त्वया प्रेरित एव नादस्तेनेदमेवं रचितं जगद्वै।
आनन्दरूपं समभावसंस्थं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥7॥

तदेव विश्वं कृपया तवैव सम्भूतमाद्यं तमसा विभातम्।
अनेकरूपं ह्यजमेकभूतं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥8॥

ततस्त्वया प्रेरितमेव तेन सृष्टं सुसूक्ष्मं जगदेकसंस्थम्।
सत्त्वात्मकं श्वेतमनन्तमाद्यं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥9॥

तदेव स्वप्नं तपसा गणेशं ससिद्धिरूपं विविधं बभूव।
सदैकरूपं कृपया तवाऽपि तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥10॥

सम्प्रेरितं तच्च त्वया हृदिस्थं तथा सुसृष्टं जगदंशरूपम्।
तेनैव जाग्रन्मयमप्रमेयं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥11॥

जाग्रत्स्वरूपं रजसा विभातं विलोकितं तत्कृपया यदैव।
तदा विभिन्नं भवदेकरूपं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥12॥

एवं च सृष्ट्वा प्रकृतिस्वभावात्तदन्तरे त्वं च विभासि नित्यम्।
बुद्धिप्रदाता गणनाथ एकस्तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥13॥

त्वदाज्ञया भान्ति ग्रहाश्च सर्वे नक्षत्ररूपाणि विभान्ति खे वै।
आधारहीनानि त्वया धृतानि तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥14॥

त्वदाज्ञया सृष्टिकरो विधाता त्वदाज्ञया पालक एव विष्णुः।
त्वदाज्ञया संहरते हरोऽपि तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥15॥



यदाज्ञया भूर्जलमध्यसंस्था यदाज्ञयाऽऽप: प्रवहन्ति नद्य:।
सीमां सदा रक्षति वै समुद्रस्तमेकदन्तं शरणं व्रजाम:॥16॥

यदाज्ञया देवगणो दिविष्ठो ददाति वै कर्मफलानि नित्यम्।
यदाज्ञया शैलगणोऽचलो वै तमेकदन्तं शरणं व्रजाम:॥17॥

यदाज्ञया शेष इलाधरो वै यदाज्ञया मोहप्रदश्च काम:।
यदाज्ञया कालधरोऽर्यमा च तमेकदन्तं शरणं व्रजाम:॥18॥

यदाज्ञया वाति विभाति वायुर्यदाज्ञयाऽग्निर्यठरादिसंस्थ:।
यदाज्ञया वै सचराऽचरं च तमेकदन्तं शरणं व्रजाम:॥19॥

सर्वान्तरे संस्थितमेकगूढं यदाज्ञया सर्वमिदं विभाति।
अनन्तरूपं हृदि बोधकं वै तमेकदन्तं शरणं व्रजाम:॥20॥

यं योगिनो योगबलेन साध्यं कुर्वन्ति तं क: स्तवनेन स्तौति।
अत: प्रणामेन सुसिद्धिदोऽस्तु तमेकदन्तं शरणं व्रजाम:॥21॥

## देवर्षिकृतं गजाननस्तोत्रम्

विदेहरूपं भवबन्धहारं सदास्वनिष्ठं स्वसुखप्रदन्तम्।
अमेयसांख्येन च लक्ष्यमीशं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥1॥

मुनीन्द्रवन्द्यं विधिबोधहीनं सुबुद्धिदं बुद्धिधरं प्रशान्तम्।
विकारहीनं सकलांगकं वै गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥2॥

अमेयरूपं हृदि संस्थितं तं ब्रह्माऽहमेकं भ्रमनाशकारम्।
अनादि-मध्यान्तमपाररूपं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥3॥

जगत्प्रमाणं जगदीशमेवमगम्यमाद्यं जगदादिहीनम्।
अनात्मनां मोहप्रदं पुराणं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥4॥

न पृथ्विरूपं न जलप्रकाशनं न तेजसंस्थं न समीरसंस्थम्।
न खे गतं पञ्चविभूतिहीनं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥5॥

न विश्वगं तैजसगं न प्राज्ञं समष्टि-व्यष्टिस्थमनन्तगं तम्।
गुणैर्विहीनं परमार्थभूतं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥6॥

गुणेशगं नैव च बिन्दुसंस्थं न देहिनं बोधमयं न ढुण्ढी।
सुयोगहीनं प्रवदन्ति तत्स्थं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥7॥

अनागतं ग्रैवगतं गणेशं कथं तदाकारमयं वदाम:।
तथापि सर्वं प्रतिदेहसंस्थं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥8॥

यदि त्वया नाथ! धृतं न किञ्चित्तदा कथं सर्वमिदं भजामि।
अतो महात्मानमचिन्त्यमेवं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥9॥

सुसिद्धिदं भक्तजनस्य देवं सकामिकानामिह सौख्यदं तम्।
अकामिकानां भवबन्धहारं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥10॥

सुरेन्द्रसेव्यं ह्यसुरै: सुसेव्यं समानभावेन विराजयन्तम्।
अनन्तबाहुं मूषकध्वजं तं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥11॥

सदासुखानन्दमयं जले च समुद्रजे इक्षुरसे निवासम्।
द्वन्द्वस्य यानेन च नाशरूपे गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥12॥

चतु:पदार्था विविधप्रकाशस्तदेव हस्तं सुचतुर्भुजं तम्।
अनाथनाथं च महोदरं वै गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥13॥

महाखुमारूढमकालकालं विदेहयोगेन च लभ्यमानम्।
अमायिनं मायिकमोहदं तं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥14॥

रविस्वरूपं रविभासहीनं हरिस्वरूपं हरिबोधहीनम्।
शिवस्वरूपं शिवभासनाशं गजाननं भक्तियुतं भजाम:॥15॥

महेश्वरीस्थं च सुशक्तिहीनं प्रभुं परेशं परवन्द्यमेवम्।
अचालकं चालकबीजरूपं गजाननं भक्तियुतं भजामः॥16॥
शिवादि-देवैश्च खगैश्च वन्द्यं नरैर्लता-वृक्ष-पशुप्रमुख्यैः।
चराऽचरैर्लोक-विहीनमेवं गजाननं भक्तियुतं भजामः॥17॥
मनोवचोहीनतया सुसंस्थं निवृत्तिमात्रं ह्यजमव्ययं तम्।
तथाऽपि देव पुरसंस्थितं तं गजाननं भक्तियुतं भजामः॥18॥
वयं सुधन्या गणपस्तवेन तथैव मर्त्यार्चनतस्तथैव।
गणेशरूपाश्च कृतास्त्वया तं गजाननं भक्तियुतं भजामः॥9॥
गजाख्यबीजं प्रवदन्ति वेदास्तदेव चिह्नेन च योगिनस्त्वाम्।
गच्छन्ति तेनैव गजाननं तं गजाननं भक्तियुतं भजामः॥20॥
पुराणवेदाः शिवविष्णुकाद्यामराः शुकाद्या गणपस्तवे वै।
विकुण्ठिताः किं च वयं स्तवामो गजाननं भक्तियुतं भजामः॥21॥





**स्वामी निरंजनानन्द** का जन्म छत्तीसगढ़ के राजनाँदगाँव में सन् 1960 में हुआ। जन्म से ही उनकी जीवन-दिशा उनके गुरु, स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा निर्देशित रही। चार वर्ष की अवस्था में वे गुरु-सान्निध्य में रहने बिहार योग विद्यालय आये, जहाँ उनके गुरु ने योग निद्रा के माध्यम से उन्हें योग एवं अध्यात्म का गहन प्रशिक्षण प्रदान किया। सन् 1971 में वे दशनामी संन्यास परम्परा में दीक्षित हुए, तत्पश्चात् 12 वर्षों तक विभिन्न देशों की यात्राएँ कर विभिन्न संस्कृतियों की गहरी समझ प्राप्त की और सब जगह अपने गुरु के योग-प्रचार कार्य को आगे बढ़ाया।

सन् 1983 में गुरु-आज्ञानुसार भारत लौटकर वे बिहार योग विद्यालय, शिवानन्द मठ तथा योग शोध संस्थान की गतिविधियों के संचालन में संलग्न हो गए। सन् 1990 में वे परमहंस-परम्परा में दीक्षित हुए और 1993 में स्वामी सत्यानन्द के उत्तराधिकारी के रूप में उनका अभिषेक किया गया। सन् 1994 में उन्होंने विश्व के प्रथम योग विश्वविद्यालय, बिहार योग भारती; सन् 2000 में योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा सन् 1995 में बच्चों के एक बृहत् योग आन्दोलन, बाल योग मित्र मण्डल का शुभारम्भ किया। मुंगेर में विभिन्न गतिविधियों का संचालन करने के साथ उन्होंने दुनियाभर के साधकों का मार्गदर्शन करने हेतु व्यापक रूप से यात्राएँ कीं। सन् 2009 में उन्हें अपने गुरु से संन्यास जीवन का एक नया अध्याय शुरू करने का आदेश प्राप्त हुआ।

सन् 2010 में उन्होंने साधकों को भारत की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं के मौलिक स्वरूप का अनुभव कराने के प्रयोजन से संन्यास पीठ की स्थापना की। इसी वर्ष से उनके जीवन में उच्च साधनाओं एवं तीर्थयात्राओं का दौर शुरू हुआ।

सन् 2013 में उन्होंने मुंगेर में बिहार योग विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में विश्व योग सम्मेलन आयोजित किया और यौगिक पुनर्जागरण का शंखनाद किया। इसी वर्ष से उन्होंने दु:साध्य पंचाग्नि तपस्या प्रारम्भ की। सन् 2014 में उन्होंने देशभर में योग का प्रसाद वितरित करने हेतु योगयात्राओं का सिलसिला प्रारम्भ किया। तब से वे यौगिक शिक्षण के उस नए अध्याय को विकसित करने में संलग्न हैं, जिसके माध्यम से लोग अपने यौगिक अनुभव को गहन कर सकेंगे। साथ ही वे भारत की अनेक प्राचीन विद्याओं एवं परम्पराओं की पुनर्प्रतिष्ठा हेतु प्रयासरत हैं। सन् 2017 में योग के क्षेत्र में उत्कृष्ट सेवाओं के लिए भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण से सम्मानित किया।

स्वामी निरंजनानन्द योग दर्शन, अभ्यास एवं जीवनशैली की गहन जानकारी और समझ रखते हैं तथा योग, तंत्र एवं उपनिषदों पर अनेक प्रमाणिक पुस्तकों के प्रणेता भी हैं। प्राचीन तथा अर्वाचीन परम्पराओं का सुन्दर सम्मिश्रण करते हुए वे इस समय मुंगेर में अपने गुरु के मिशन को आगे बढ़ाने के कार्य में संलग्न हैं।




SATYANANDA YOGA
BIHAR YOGA

*'गणेश-आराधना की चर्चा करने वाले शास्त्रों में बतलाया गया है कि आठ प्रकार के शत्रु हमारे भीतर विद्यमान हैं, और ये आठ शत्रु हमारी आध्यात्मिक प्रगति में बाधक हैं। वैदिक दर्शन में इन आठ शत्रुओं – मद, अभिमान, मात्सर्य, क्रोध, लोभ, मोह, काम और ममता को समाप्त करने के लिए गणेश जी की आराधना की जाती है। जब ये आठ शत्रु समाप्त हो जाते हैं तो हमारा भौतिक जीवन भी अच्छा, सुखदायी और प्रेरक होता है, तथा हमारे आध्यात्मिक जीवन का भी विकास होता है।'*

सन् 2009 से स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के जीवन का एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ है और मुंगेर में योगदृष्टि सत्संग शृंखला के अन्तर्गत योग के विभिन्न पक्षों पर दिये गये प्रबोधक व्याख्यान स्वामीजी की इसी नयी जीवनशैली के अंग हैं।

गणपति आराधना, स्वामीजी द्वारा गंगा दर्शन विश्व योगपीठ में अगस्त 2012 में दिये सत्संगों का विषय था। इन सत्संगों में स्वामीजी हमें गणेश-जन्मभूमि, कैलास की यात्रा पर ले गए और गणेश जी के जन्म, स्वरूप और प्रतीकों के महत्त्व पर प्रकाश डाला। साथ ही स्वामीजी ने मानव जीवन में गणेश जी की भूमिका तथा वैदिक एवं तांत्रिक परम्पराओं में उनकी आराधना की विधियों का सुन्दर, सुबोध निरूपण भी प्रस्तुत किया है।




ISBN :978-81-938420-4-1